विचारों के आभूषण

लेखक / संग्रहकर्त्ता

रतनलाल सी. बाफना

प्रकाशक

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

संरक्षक : अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

विचारों के आभूषण

(विभिन्न जीवनोपयोगी विचारों का संकलन)

लेखक/संग्राहक

रतनलाल सी. बाफना

संपादक

डॉ. दिलीप धींग

प्रकाशक

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

(संरक्षक-अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ)

पुस्तक :

विचारों के आभूषण

प्रकाशकः

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

दुकान नं. 182 के ऊपर,

बापू बाजार, जयपुर-302003

दूरभाष : 0141-2575997, 2571163

फैक्स : 0141-2570753

Email : sgpmandal@yahoo.in

द्वितीय संस्करण : 2015

मुद्रित प्रतियाँ : 2100

लेखक/संग्राहक : रतनलाल सी. बाफना

संपादकः डॉ. दिलीप धींग

मूल्य : **20/-** (बीस रुपये मात्र)

लेजर टाईप सैटिंग :

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

मुद्रकः दी डॉयमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, जयपुर

अन्य प्राप्ति स्थल :

- **श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ**
  घोड़ों का चौक, **जोधपुर-342001**
  (राजस्थान)
  फोन : 0291-2624891
  मोबाइल : 09414267824

- **Shri Navratan ji Bhansali**
  C/o. Mahesh Electricals,
  14/5, B.V.K. Ayangar Road,
  BANGALURU-560053
  (Karnataka)
  Ph. : 080-22265957
  Mob. : 09844158943

- **Shri B. Budhmal ji Bohra**
  211, Akashganga Apartment,
  19 Flowers Road, Kilpauk,
  CHENNAI-600010 (TND)
  Ph. : 044-26425093
  Mob. : 09444235065

- **श्रीमती विजयानन्दिनी जी मल्हारा**
  ''रत्नसागर'', कलेक्टर बंगला रोड़,
  चर्च के सामने, 491-ए, प्लॉट नं. 4,
  जलगाँव-425001 (महा.)
  फोन : 0257-2223223

- **श्री दिनेश जी जैन**
  1296, कटरा धुलिया, चाँदनी चौक,
  दिल्ली-110006
  फोन : 011-23919370
  मो. 09953723403

प्रकाशकीय

सद्विचारों का संचय

अहिंसा तीर्थ, जलगाँव के संस्थापक माननीय श्री रतनलाल सी. बाफना आभूषणों के लब्धप्रतिष्ठ व्यवसायी हैं। व्यवसायी होने के साथ ही वे एक समर्पित समाजसेवी भी हैं। उनकी सेवायें बहुआयामी एवं बहुजनोपयोगी होने के साथ ही पशु-पक्षियों के लिए भी जीवनदायिनी हैं। सेवा और साधना के साथ ही वे सद्विचारों के पारखी और उनके संकलनकर्ता भी हैं। रत्नजटित स्वर्ण-रजत के आभूषणों को सहेजने के साथ ही वे जीवनोपयोगी सद्विचारों के आभूषणों को भी सहेजते हैं। सद्विचारों को सहेजने के लिए उन्होंने अनेक प्रकार के उपाय किये। उनमें दैनिकी या दैनन्दिनी (डायरी) लिखना एक श्रेष्ठ उपाय है।

आचार्य श्री हस्ती के जीवन-चरित 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' के सम्पादकीय में डॉ. धर्मचन्दजी जैन लिखते हैं कि ग्रंथ लेखन में आचार्यप्रवर की उपलब्ध दैनन्दिनियों का यथावश्यक उपयोग किया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि युगमनीषी आचार्य श्री हस्ती भी डायरी लिखते थे। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी और उद्योगपति घनश्यादास बिड़ला जैसे महानुभाव भी डायरी लिखते थे। एक व्यस्त समाजसेवी तथा बड़े व्यवसायी होने पर भी, श्री बाफनाजी द्वारा समय-समय पर दैनिकी (डायरी) में विचार लिखना आश्चर्यजनक है और प्रेरक भी। इससे उनका सम्यक् ज्ञान और सत्साहित्य के प्रति असीम आदर और आकर्षण अभिव्यक्त होता है।

उनकी डायरियों में आगमों के श्लोक, शास्त्रों की सूक्तियाँ, विचारकों के विचार, सन्तों के प्रवचनांश, कवियों की कवितायें, काव्यपद, दोहे आदि

अनेक प्रकार की विविध सामग्री संगृहीत हैं। अहिंसा, शाकाहार, जैन विद्या और जीवनमूल्यों के लिए समर्पित साहित्यकार डॉ. दिलीप धींग ने उनकी डायरियों में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी सामग्री को विषय और विधा के अनुसार वर्गीकृत, सम्पादित और अनुक्रमित किया। एतदर्थ हम कवि डॉ. धींग के आभारी हैं। उनके इस निष्ठापूर्ण साहित्यिक उपक्रम के फलस्वरूप आदरणीय बाफना साहब की दो पुस्तकें-(1) सबको प्यारे प्राण, तथा (2) रत्नमंजूषा; प्रकाशित और प्रशंसित हो चुकी हैं। अब यह तीसरी पुस्तक 'विचारों के आभूषण' का प्रथम संस्करण-2014 में प्रकाशित किया गया था अब पाठकों के हाथों में द्वितीय संस्करण-2015 सौंपते हुए हमें अतीव प्रसन्नता है। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा प्रकाशित इन पुस्तकों के माध्यम से श्री बाफनाजी की गुणानुरागिता और स्वाध्यायशीलता प्रकट हुई। इसके साथ ही पाठक उनके प्रेरक व्यक्तित्व और कृतित्व की एक झलक भी पा सके। हमें विश्वास है कि यह पुस्तक भी प्रचुर प्रचार पायेगी और पाठकों को सद्राह पर अग्रसर होने की प्रेरणा देती रहेगी।

-:: निवेदक ::-

कैलाशमल दुगड़	**सम्पतराज चौधरी**	**विनयचन्द डागा**
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

लेखक/संग्राहक की कलम से

दीप से दीप...

मेरे जीवन में परम पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. का अधिक प्रभाव रहा। श्रेष्ठ संस्कारों के साथ धर्म और गुरुदेव के प्रति श्रद्धा के बीजारोपण का श्रेय मेरी पूजनीया माताजी श्रीमती सायरबाईजी बाफना को है। मातोश्री सायरबाईजी मुझे बचपन से ही गुरुदेव एवं सन्तों के पास ले जाने एवं भेजने में बहुत सहयोगी एवं प्रेरक रहीं। धर्म-स्थानक में जाना, साधु-साध्वियों के दर्शन व प्रवचन-श्रवण का लाभ लेना तथा उनके शुभाशीष पाना आदि जीवन-निर्माणकारी सुसंस्कार मुझे मेरी उपकारी माताजी के द्वारा ही प्राप्त हुए। जलगाँव में पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के दो यशस्वी चातुर्मास हुए, उनमें प्रमुख निमित्त माताजी का रहा।

माता-पिता के सुसंस्कार और सदगुरु के सान्निध्य और मार्गदर्शन में मैंने जीवन को अधिकाधिक सदगुणों तथा सत्कार्यों से सजाने और सँवारने का प्रयत्न किया। गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज के पावन सान्निध्य में सदगुणों के विकास और विस्तार के उपयोगी मार्गदर्शन प्राप्त हुए। वे गुणों के पारखी और प्रशंसक थे, इसलिए स्वयं भी अगणित गुणों के सागर बन गये थे। इस सम्बन्ध में गुणानुराग कुलक की एक प्राकृत गाथा बहुत प्रेरक है -

उत्तम गुणाणुराओ-निवसइ हि य यंमि जस्स पुरिसस्स।
आतित्थयरपयाओ, न दुल्लहा तस्स रिद्धिओ।

जिसके हृदय में उत्तम गुणवान व्यक्तियों के प्रति अनुराग है, उसे

परम पद तक की ऋद्धियाँ भी दुर्लभ नहीं हैं। आचार्य श्री हस्ती की सुलझी हुई गुण-दृष्टि में परम्पराओं और विचारों के भेद गौण हो जाते थे। जब उन्होंने देखा कि जैन परम्परा में श्रुत और श्रुत-साधकों का यथेष्ट आदर नहीं हो रहा है, तब उन्होंने स्वाध्याय की अलख जगाई और विद्वत् निर्माण की प्रेरणायें दीं। मैं उनके स्वाध्याय अभियान तथा अन्य प्रेरणाओं से जुड़ा। उनके प्रेरणा-पथ पर चलने का मैंने अनेक प्रकार से प्रयत्न किया। उनमें एक प्रकार रहा, अच्छी बातों को अपनी दैनिकी (डायरी) में लिखना। जब किसी बात को हम स्वयं कलम लेकर कागज पर लिखते हैं तो वह बात याद हो जाती है या हमेशा ध्यान में रहती है। इससे हमारी विचार शक्ति बढ़ती है। डायरी लिखने का यह एक लाभ है।

मैं जब लिखने लगा तो सन्तों की धर्मसभा में उनके प्रवचनांश भी नोट करने लगा। इस प्रकार विचार से विचारों की यात्रा गतिमान होती रही। किसी भी विचार का महत्व तब और बढ़ जाता है, जब उसे आचरण में ढाला जाता है। सन्तों के सान्निध्य और मार्गदर्शन से मैंने कई विचारों को जीवन, व्यवसाय, सेवा और साधना में लागू किया। आमदनी का एक हिस्सा परमार्थ में लगा सका और कुछ स्थायी महत्व के प्रकल्प भी स्थापित हो सके। उन प्रकल्पों के माध्यम से अहिंसा भावना का विस्तार, सेवा की प्रेरणा और रोजगार के नये अवसर सृजित हुए। जो भी उचित-उत्तम हुआ या किया, उन सबका श्रेय मैं माता-पिता तथा देव-गुरु-धर्म को देता हूँ।

मेरा मानना है कि अच्छे विचार और अच्छे कार्य सबको प्रेरित करते हैं और दीप से दीप जलते हैं। अहिंसा तीर्थ का उदाहरण लें। इस तीर्थ के माध्यम से गोसेवा, जीवदया, शाकाहार और अहिंसा की प्रत्यक्ष प्रेरणाएँ

मिलती हैं। इनके अलावा परिश्रम, ग्राम्य अर्थव्यवस्था का विकास, प्रकृति और संस्कृति की रक्षा, जीव-जगत् से मानव का रिश्ता जैसी अनेक बातें भी जानने-सीखने को मिलती हैं। शाकाहारिता के मूल में भी ऐसी अनेक सत्प्रेरणाएँ हैं, जिनसे संसार को अवगत कराना हमारा सबका फर्ज है। वह सिर्फ आहार ही नहीं है, अपितु उसके साथ मानव सभ्यता, संस्कृति, विज्ञान और अध्यात्म के विकास के बेहद रोचक और प्रेरक तथ्य जुड़े हुए हैं। ऐसे अनेक उपयोगी तथ्यों के अन्वेषक साहित्यकार डॉ. दिलीप धींग ने इस किताब का कुशलतापूर्वक सम्पादन किया है। अनेक कठिनाइयों के बावजूद कवि डॉ. धींग पिछले तीन दशकों से साहित्य-साधना कर रहे हैं। देश-विदेश का विविध व विशाल पाठक वर्ग उनकी लेखनी की बहुआयामिता, मौलिकता और प्रभावशीलता से सुपरिचित है। मैं उनकी सारस्वत: सेवाओं की अनुमोदना करता हुआ आशीर्वाद देता हूँ कि वे शाकाहार, सदाचार और जैनविद्या का परचम पूरी दुनिया में फहरायेंगे और दीप से दीप जलायेंगे। वर्तमान समय में मूल्यपरक श्रेष्ठ लेखन की महती आवश्यकता है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल पिछले सात दशकों से अल्पमूल्य पर उत्तम साहित्य पाठकों को उपलब्ध करवा रहा है। अनेक लेखक, कवि और विद्वान् मण्डल से प्रोत्साहित हुए हैं तथा उनसे मण्डल की श्रुत-निधि में बढ़ोतरी हुई है। मण्डल के प्रकाशनों से लाखों पाठक लाभान्वित हुए हैं। 'जिनवाणी' (हिन्दी मासिक) मण्डल की कीर्ति-पताका है। ऐसे प्रतिष्ठित संस्थान से मेरे द्वारा संगृहीत तीसरी कृति के प्रकाशन का मुझे हर्ष और गर्व है। मण्डल से प्रकाशित साहित्य पाठकों को आकर्षित करता रहे तथा मण्डल का सुयश अभिवर्द्धित होता रहे, यह मंगलभावना है। जिन विचारकों, सन्तों

और पुस्तकों के विचार इस पुस्तक में संगृहीत हैं, उन सबके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। पुस्तक को सुन्दर और उपयोगी बनाने में प्रत्यक्ष और परोक्ष सहयोग करने वाले सभी जनों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ। 'विचारों के आभूषण' धारण करके पाठक अपने जीवन को भीतर-बाहर से सजायेंगे, सँवारेंगे, बेहतर बनायेंगे तथा सेवा-साधना के सुपथ पर अग्रसर होंगे, ऐसा विश्वास है।

-रतनलाल सी. बाफना
91, नयनतारा, सुभाय चौक,
जलगाँव-425001 (महाराष्ट्र)

सम्पादकीय

विचार–शक्ति

मनुष्य मननशील और विचारशील प्राणी है। विचारशीलता की वजह से ही वह अन्य प्राणियों से विशिष्ट और विकसित है। विचारों में आश्चर्यजनक शक्ति और ऊर्जा होती है। विचार वस्तु से भी अधिक प्रभावशाली और शक्तिशाली होते हैं। विचारों की शक्ति से मानव जाति के इतिहास में अनेक युगान्तरकारी परिवर्तन हुए और आज भी होते हैं। विचार–जगत बहुत बड़ा होता है। कुछ विचारक जीवन और जगत के बारे में अपने कुछ विचारों को शब्दांकित करते हैं या कर पाते हैं। इस प्रकार बहुत सारे विचारक, साधक, सन्त, कवि, साहित्यकार, विद्वान, ज्ञानी, विज्ञानी हर कालखण्ड में विभिन्न प्रकार के विचार संसार को देते हैं। उनके विचार श्रुतियों, स्मृतियों और ग्रंथों में सुरक्षित रखे जाते हैं। इस प्रकार शब्द रूप में सुरक्षित विचार–संसार बहुत बड़ा हो जाता है। लेकिन शब्द–संसार से भी कई–कई गुना बड़ा अर्थ–संसार होता है। एक–एक शब्द, वाक्य, पद, श्लोक, पाठ, अध्याय और पुस्तक की मनीषीगण अनेक सन्दर्भों में अनेक–अनेक व्याख्यायें करते हैं। इस प्रकार विचार से विचार की यात्रा निरन्तर गतिमान रहती है। यह सतत विचार–यात्रा ही मानव सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान–विज्ञान के विकास की यात्रा बन जाती है।

विचार सब तरह के होते हैं। अच्छे व सच्चे विचार भी होते हैं, बुरे व मिथ्या विचार भी होते हैं और मिश्रित विचार भी होते हैं। कभी–कभी

विचारों की अच्छाई और सच्चाई के मापदण्ड देश, काल आदि सन्दर्भों से भी जुड़ जाते हैं। विभिन्न सन्दर्भों के आधार पर विभिन्न व्यक्तियों के द्वारा जब विचारों का परीक्षण किया जाता है तो एक ही विचार के अनेक पहलू खड़े हो जाते हैं। विचार की इस बहुधर्मिता या अनन्तधर्मिता को वस्तु की अनन्तधर्मिता कह सकते हैं। एक ही वस्तु या विचार के अनेक, असंख्य एवं अनन्त आयाम ही अनेकान्त दर्शन का आधार बनते हैं। प्रमाणवाक्य और नयवाक्य से वस्तु में अनन्त धर्मों की सिद्धि होती है। वस्तु के अनन्त धर्मों में से एक समय में किसी एक धर्म की अपेक्षा लेकर वस्तु के प्रतिपादन को नय कहते हैं। इसलिए जितने तरह के वचन होते हैं, उतने ही तरह के नय हो सकते हैं। नय के एक से लेकर संख्यात तक भेद हो सकते हैं।

जिन विचारों से जीव और जगत का व्यापक हित जुड़ा है, उन विचारों का संग्रहण, संरक्षण और प्रचार-प्रसार किया जाना चाहिये। गुणग्राही व्यक्ति उत्तम विचारों का संग्रह करते हैं। वे सम्यक् विचार-पथ पर चलते हुए सद्विचार को सदाचार में परिवर्तित करते हैं और सद्विचार और सदाचार का प्रचार-प्रसार भी करते हैं। किसी भी विचारक के सुविचार को प्रचारित करने से विचारक और प्रचारक दोनों सुयश के भागी बनते हैं। ऐसे ही सुयश के भागी हैं, शाकाहार और सदाचार के प्रबल प्रचारक श्री रतनलाल सी. बाफना। उन्होंने अच्छे विचारों को अपनी दैनिकी (डायरी) में लिखा तथा अपने वचन-व्यवहार में उनका भरपूर उपयोग किया। इससे उनके जीवन को नित नई दिशायें मिलती चली गईं और उनके जीवन से दूसरों को भी अच्छी प्रेरणायें मिलती चली गई। इससे यह स्पष्ट होता है कि सद्विचार और सदाचार

में अखूट शक्ति तथा असीम शांति होती है। शक्ति और शांति का यह झरना समाज और संसार को सरसब्ज बना सकता है।

स्वर्णाभूषणों के विख्यात व्यवसायी श्री बाफनाजी की डायरियों में से जब मैंने विषय और विधा के अनुसार विभिन्न विचार चुने और उन्हें सम्पादित किया तो मुझे लगा कि ये विचारों के आभूषण हैं। स्वर्ण-रजत के आभूषण व्यक्ति को बाहर से अलंकृत कर सकते हैं तो विचारों के आभूषण व्यक्ति को अन्तर से अलंकृत कर सकते हैं। अतः मन-मस्तिष्क को अलंकृत करने वाले इन विचारों के आभूषणों की किताब का नाम 'विचारों के आभूषण' रख गया है।

इस पुस्तक के सम्पादन के दौरान जहाँ सन्दर्भ उपलब्ध हुए, वहाँ उनका उल्लेख किया है। आचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरिजी के प्रवचनांश में तो तारीख और स्थान का उल्लेख भी किया गया है। इस पुस्तक को पढ़ने पर पाठकगण श्री बाफनाजी के प्रेरक व्यक्तित्व और कृतित्व का आसानी से अनुमान लगा सकते हैं। वैराग्य, संसार की नश्वरता, दानशीलता, क्षमा, अहिंसा, अपरिग्रह, धर्म-ध्यान, साधना, सेवा, परोपकार जैसे मानवीय मूल्यों के प्रति श्री बाफनाजी का प्रगाढ़ अनुराग स्पष्ट झलकता है। ऐसे ही मूल्यों की समाज और संसार को अधिकाधिक आवश्यकता है।डायरियों के आधार पर पुस्तक तैयार करना काफी श्रमसाध्य और समयसाध्य होता है। तरह-तरह की व्यस्तताओं के बीच मेरे लिए विशेष समय और श्रम का नियोजन कठिनतर हो रहा था। जैनविद्या शोध प्रतिष्ठान (रिसर्च फाउण्डेशन फॉर जैनोलोजी) के संस्थापक महासचिव श्री एस. कृष्णचन्द चोरड़िया ने विशेष

सुविधायें प्रदान करके मेरे सम्पादन-कार्य को समय पर पूरा करने में सहयोग किया, एतदर्थ उनके प्रति हार्दिक आभार। पुस्तक के बेहतरीन मुद्रण और प्रकाशन के लिए सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल परिवार के प्रति अपरिमित कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। सभी ज्ञात-अज्ञात सहयोगी धन्यवाद के पात्र हैं। विश्वास किया जाना चाहिये कि यह पुस्तक पाठकों के हृदय को विशाल और वैचारिक स्तर को समुन्नत बनाने में मददगार सिद्ध होगी।

-डॉ. दिलीप धींग

निदेशक : अंतर्राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र

सुगन हाउस, 18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट

साहूकारपेट, चेन्नई-600001

अनुक्रम

1. मुझे अध्यक्ष नहीं बनना 1
2. वैयक्तिक और संघीय विकास के सूत्र 2
3. प्रवचन प्रभाकर आचार्य श्री हीरा 6
4. गुरुकृपा 7
5. दान की महिमा 8
6. परिग्रह के कष्ट 16
7. तब तू क्या करेगा ? 21
8. तब तेरा कौन होगा ? 23
9. तेरा क्या होगा ? 25
10. अब भी समझें तो अच्छा 26
11. आत्मचिन्तन 27
12. जीवन का चिन्तन 28
13. पुण्य और पाप 30
14. मुँहपत्ती के लाभ 32
15. पारसमणि 34
16. असली कार 35
17. परिश्रम 36
18. सहअस्तित्व 37
19. साधु-धर्म 37
20. सच्चा धार्मिक 38
21. कार्य-पूर्व तैयारी 38
22. शरीर है मशीन 39
23. चेहरे 39
24. मोक्ष की दूरी 40
25. अनुत्तरित प्रश्न 41
26. घर को स्वर्ग बनाने हेतु 42
27. वाणी के आठ गुण 42
28. आत्म-कल्याण 42
29. संकेत 43
30. सुख का रहस्य 44
31. अपूर्व अवसर 44
32. नीतिपूर्ण अर्जन 45
33. नौकर ही दोषी 45
34. विज्ञान और धर्म 46
35. अनित्य संसार 46
36. एरण्ड और बरगद 47

37. साधु है पूजनीय 48
38. आसक्ति 48
39. वर्तमान 48
40. रोमांचक कहानी 49
41. स्वयं का दायित्व 49
42. क्रोध व क्षमा 49
43. दुर्जन 50
44. ईश-स्मरण 50
45. छद्म अपनापन 50
46. स्थायी सफलता 50
47. उपकार 51
48. हृदयहीनता 51
49. सफल व्यापारी 51
50. बेईमानी 52
51. रोना नहीं रोएँ 52
52. सुख-त्याग जरूरी 52
53. लक्ष्य 53
54. प्रार्थना और परिश्रम 53
55. वक्त की बात 53
56. दिन का उपयोग 54
57. सुगम राहें 54
58. लक्ष्मी 54
59. सहिष्णुता 54
60. दयालु रहीम 55
61. लड़ाई 55
62. विकृति की शक्ति 56
63. दोराहे पर जीवन 56
64. बाह्य रूप 56
65. प्रश्न 56
66. सुख व पोशाक 57
67. योग का उपयोग 57
68. धन का उपयोग 57
69. सन्त कौन ? 58
70. स्वयं पर विश्वास 58
71. जन्मदिन 59
72. संयोग-वियोग 59
73. अतृप्ति 59
74. हताशा 60
75. विश्व-आकाश 60
76. हम परमात्मा बनें 60
77. स्वयं की चिन्ता 61
78. हम सब यात्री 61

79. परिवर्तन 62
80. कला 62
81. चंचल सत्ता 62
82. समयोचित उपयोग 63
83. धन का माप 63
84. गर्भपात 63
85. नियम 64
86. आसक्ति व संयम 64
87. हैसियत 64
88. सरल-कठिन 64
89. स्वयं को जानें 65
90. प्रायश्चित 65
91. ब्रह्मचर्य 66
92. निर्णय 66
93. संतोष 66
94. अतृप्ति 67
95. सामायिक 67
96. मन 67
97. ऐसा भी होता है 68
98. इन्द्रिय पराधीनता 68
99. चौरासी का चक्कर 69
100. हे मानव! 69
101. हे जीव! 69
102. काल की घण्टी 70
103. भयातीत वैराग्य 70
104. बुढ़ापा 70
105. सद्भाव 71
106. अहंकार 71
107. मान-पत्र 72
108. मृदुता 72
109. चापलूसी 73
110. धर्म 73
111. असली दौलत 74
112. मानवता 75
113. समय की मार 75
114. प्रमाद 75
115. पाई-पाई का हिसाब 76
116. मर्यादा 76
117. व्यसन 77
118. भाषण व प्रवचन 77
119. धर्म और धंधा 77
120. सम्यग्दृष्टि 78

121. महापुरुष सबके 78

122. युग 79

123. प्रार्थना व श्रम 79

124. आशीर्वाद 79

125. टालमटोल 80

126. पानी से पहले 80

127. देह का सदुपयोग 81

128. शालीन परिधान 81

129. पड़ोसी 81

130. धर्मपत्नी 82

131. आहार 82

132. सामाजिक अहिंसा 83

133. भूकम्प 83

134. दुर्लभ मानव जीवन 84

135. पुण्य 84

136. भावना 85

137. अहिंसा-तीर्थ में आचार्य विजयरत्न-
सुन्दरसूरि के प्रवचन 85

138. आचार्यश्री के फरवरी-2004 के
प्रवचनांश 92

139. मृत्यु चिन्तन 112

140. पुत्र को पिता का पत्र 122

141. विचार और प्रसंग 123

142. बोध-वाक्य 133

1. मुझे अध्यक्ष नहीं बनना

आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के जीवन की सांध्यवेला में, उनकी इच्छा थी कि मैं अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष का दायित्व संभालूँ। पाली में मैंने श्री मोफतराजजी मुणोत से विनती की कि इस समय आप यह पद स्वीकार कीजिये, बाद में यह जवाबदारी मैं संभाल लूँगा। मुणोत साहब ने मेरी भावना का समादर करते हुए अध्यक्ष पद स्वीकार किया। उनके अध्यक्षीय कार्यकाल की सम्पन्नता पर उन्होंने मुझे इस पद की जिम्मेदारी ग्रहण करने के लिए कहा। दरअसल बात यह थी कि मैं अध्यक्ष पद संभालना नहीं चाहता था। संघ के शीर्ष पद को लेकर मेरे मन में एक डर-सा था। अतः मैंने इस पद के प्रति मेरी अनिच्छा से मुणोत सा. को अवगत करा दिया। उस समय उन्होंने शासन सेवा समिति की एक मीटिंग बुलाई, जिसका आयोजन पीपाड़शहर में उनके नवनिर्मित भवन में था। लगभग सभी सदस्य मीटिंग में उपस्थित थे। मैं भी उपस्थित था। मीटिंग में एक ही सुर और सम्मति थी कि आर.सी. को राष्ट्रीय अध्यक्ष पद प्रदान किया जाय। सभी सदस्य घण्टों तक मुझसे अध्यक्ष पद के लिए आग्रह करते रहे, पर मैं टस से मस नहीं हुआ। मैंने सामान्य भाषा में अपनी बात कही कि कोई भी बड़ी जिम्मेदारी लेते समय मेरा रक्तचाप (बी.पी.) बढ़ जाता है तथा इस सम्बन्ध में मैंने घर पर भी चर्चा नहीं की है। मेरी इस बात पर सदस्यों ने उसी समय मेरी धर्मपत्नी नयनतारा तथा पप्पू से दूरभाष पर बात कर स्वीकृति ले ली। इतना होने पर भी मेरा मन तैयार नहीं हुआ। साढ़े चार घण्टे की अनिर्णीत सभा से सभी निराश थे। जब सदस्यगण आचार्यश्री की सेवा में पहुँचे तो स्वयं आचार्यश्री ने भी राष्ट्रीय अध्यक्ष पद के लिए मेरे ही नाम को उचित बताया।

संघहित, सर्वसम्मति तथा आचार्यप्रवर की भावना के अनुमोदन के लिए शासन सेवा समिति के सदस्यों ने परिपक्वता का परिचय दिया। उन्होंने

संघसेवी वरिष्ठ श्रावक श्री नथमलजी हीरावत को फोन करके जयपुर से पीपाड़शहर बुलाया। मैं तो निश्चिन्त था, क्योंकि मुझे अध्यक्ष नहीं बनना था। दूसरे दिन सुबह श्री हीरावतजी से मुलाकात हुई। उन्होंने तरकीब से मुझे कहा, ''मैं आपको अध्यक्ष बनने का आग्रह नहीं करता। मैं तो यह कहने आया हूँ कि यदि आर. सी. अध्यक्ष नहीं बनते तो कोई बात नहीं, किन्तु यह तो बड़े आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की इच्छा व आदेश को साकार करने का प्रयत्न हम कर रहे हैं।'' उन्होंने कड़क शब्दों में कहा कि आप अध्यक्ष नहीं बनते हैं तो कार्यालय में एक प्रबंधक रखकर संघ-व्यवस्था कर देना उचित रहेगा।

इतने पर भी मैं मेरे निश्चय पर अटल था। पीपाड़शहर से रवाना होने का वक्त हो रहा था। मैं आचार्यप्रवर से मंगलपाठ लेने के लिए स्थानक में पहुँचा। श्री मुणोत सा. पहले से ही वहाँ मौजूद थे। आचार्यश्री जिस कक्ष में विराजित थे, उस कक्ष में प्रवेश करते ही तथा आचार्यश्री के दर्शन करते ही मेरे विचारों में एकाएक परिवर्तन हुआ। एकदम बिना कुछ विचार किये मैंने आचार्यश्री के समक्ष श्री मुणोत सा. को अध्यक्ष पद ग्रहण करने की स्वीकृति दे दी। सभी जन विस्मित और प्रसन्न थे कि एकाएक यह परिवर्तन कैसे हो गया। आचार्यश्री की मुखमुद्रा देखते ही वह सब हुआ था या और कोई आकस्मिक बात थी, यह मैं आज तक नहीं समझ पाया हूँ।

(नवम्बर 2013 के 'जिनवाणी' के आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र दीक्षा अर्द्धशताब्दी विशेषांक में प्रकाशित)

2. वैयक्तिक एवं संघीय विकास के पाँच सूत्र

शासन-सेवा समिति के संयोजक श्री रतनलाल सी. बाफना 1997 में अ. भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष बने और दो उपलब्धिपूर्ण कार्यकाल पूरे किये। अध्यक्षीय कार्यभार संभालने के वक्त कुशल वक्ता श्री बाफनाजी द्वारा लिखित यह भाषण आज भी उपयोगी है।

मेरे जैसे सामान्य कार्यकर्ता का इस गुरूतर भार को वहन करने हेतु एकमत से मनोनयन किया गया, एतदर्थ मैं आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर, संरक्षक मंडल, शासन सेवा समिति एवं सभी जनों का हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ। मैं यह विश्वास दिलाता हूँ कि आपके सबके सहयोग व आचार्यप्रवर के आशीर्वाद से जिनशासन एवं रत्नसंघ की गौरव गरिमा को अक्षुण्ण बनाये रखने तथा संघ के ज्ञान दर्शन चारित्र में उत्तरोत्तर वृद्धि हेतु निरन्तर प्रयत्नशील रहूँगा।

किसी भी कार्य का उत्तरदायित्व संभालने के पश्चात् उसे सुंदर व समर्पण भाव से करना मेरा स्वभाव है। चाहे वह स्वर्ण अलंकारों का व्यापार हो या शाकाहार व सदाचार का अभियान हो। अब स्वर्ण, शाकाहार व सदाचार इन तीन के साथ संघसेवा का चौथा आयाम जुड़ रहा है। स्वर्ण अलंकारों के व्यापार से ज्यादा महत्व है, शाकाहार-सदाचार अभियान का और शाकाहार-सदाचार अभियान से भी ज्यादा महत्व है, संघसेवा का। वस्तुतः संघसेवा के अन्तर्गत शाकाहार, सदाचार तथा अन्य सभी लोकोपकारी व आध्यात्मिक प्रकल्प सहज रूप से जुड़े रहते हैं।

रत्नसंघ का संगठन, शक्ति व आदर्श सभी सम्प्रदायों के लिए मिसाल बनें, इन्हीं भावनाओं को लेकर मैं पंचसूत्री कार्यक्रम के साथ मेरे कार्यकाल का श्रीगणेश करना चाहता हूँ।

(1) सन्त-दर्शन-वर्ष में कम से कम एक बार पूज्य आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर व संत-महासतीजी सपरिवार दर्शन करना आवश्यक है। परिवार में विवाह के प्रसंग पर नवविवाहित युगल के साथ, अन्य किसी खुशी के प्रसंग पर या परिवार में किसी सदस्य के दिवंगत होने पर सपरिवार आचार्यप्रवर के दर्शनार्थ पहुँचना जरूरी समझना चाहिये। सपरिवार से मेरा आशय परिवार के युवक-युवती तथा बाल-बच्चों सहित है। आज की

बाल-युवा पीढ़ी धर्म व धर्मसंघ से कटती जा रही है। व्याख्यान में अधिकतर बुजुर्ग स्त्री-पुरुषों की उपस्थिति रहती है। हमारे संत-सती वर्ग से नई पीढ़ी की पहचान कम हो रही है। अतः खासकर नई पीढ़ी को धर्म संघ से जोड़ने के लिए इस योजना को बनाया गया है। जिससे बच्चों में सुसंस्कार, धर्म में अभिरुचि तथा संघ से लगाव हो सके।

(2) पारिवारिक सामायिक-संघ के हर परिवार में सप्ताह में एक दिन एक साथ, एक सामायिक बच्चों, बड़े-बजुर्गों, बहुओं सहित सभी सदस्यों को मिलकर करनी चाहिये। सामायिक में 25 मिनिट उत्तराध्ययन सूत्र का स्वाध्याय, 15 मिनिट धर्मकथा व 10 मिनिट प्रार्थना का कार्यक्रम रखा जा सकता है। 'उत्तराध्ययन सूत्र'' को 'जैन धर्म की गीता' माना जाता है। मूल गाथा, अर्थ व विवेचन को पढ़कर उस पर चिंतन किया जाना चाहिये।

'गुरूहस्ती के दो फरमान। सामायिक स्वाध्याय महान।'' आगम-वाणी के आधार पर आचार्य श्री हस्ती ने इन दो साधनाओं को जीवन का अंग बनाने का आह्वान किया, जिनका पालन करना हमारा कर्त्तव्य है। इससे आने वाली पीढ़ी का धर्म के प्रति, सामायिक-स्वाध्याय के प्रति रुझान उत्पन्न होगा। सामूहिक पारिवारिक धर्माराधना से पारस्परिक मनमुटाव समाप्त होगा। जहाँ परिवार है, वहाँ कभी पिता-पुत्र, भाई-भाई, सास-बहू, नणद-भोजाई आदि परिवार-सदस्यों के बीच तनाव या मुटाव हो सकता है। सपरिवार सामायिक-स्वाध्याय की योजना पारिवारिक स्नेह सद्भावना में वृद्धि कर रत्नत्रय की आराधना में सहायक होगी। इससे घर के प्रकम्पन्न शुभ होंगे। जिससे हर परिवार में आनंद मंगल रहेगा।

(3) जूठन नहीं छोड़ना-भोजन हो या नाश्ता, दूध हो या चाय; हम कभी जूठन नहीं छोड़ें। इससे हम एक ओर हमारे आठवें अनर्थदण्ड विरमण व्रत की आराधना करेंगे, दूसरी ओर पर्यावरण की रक्षा करने में सहायक होंगे। थाली धोकर पीना श्रेष्ठ माना गया है। अगर थाली धोकर

पीना संभव नहीं हो तो जूठन नहीं छोड़ना, यह नियम सहज संभव है। इससे जीव-जंतुओं की रक्षा तथा स्वच्छता के पालन के साथ ही अन्न-जल व खाद्य पदार्थों की बचत होती है।

(4) निंदा विकथा से दूर रहें-प्रायः मैंने देखा है कि लोगबाग अपनी सम्प्रदाय को श्रेष्ठ बताकर दूसरी संप्रदाय की निंदा, विकथा व आलोचना में व्यर्थ समय की बर्बादी करते हैं। इससे पूरे समाज का वातावरण दूषित बनता है; पारस्परिक स्नेह व सौहार्द की भावना का लोप हो जाता है। अतः सभी श्रावक-श्राविकायें इस साम्प्रदायिक जहर से कोसों दूर रहें। हमें स्मरण रखना चाहिये कि पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज को केवल स्थानकवासी समाज के आचार्य, सन्त व नर-नारी ही नहीं, अपितु मूर्तिपूजक तथा अन्य समाजों के आचार्य, सन्तगण व श्रद्धालु भी बहुत आदर व पूज्यभाव से नमन करते थे। सौहार्द की इस अनमोल विरासत को हमें सावधानी पूर्वक सहेजना है।

(5) जय जिनेन्द्र अभिवादन-कई लोग आपस में मिलने पर या दूरभाष पर कई तरह के सम्बोधनों से वार्तालाप की शुरूआत करते हैं। हाय, हेलो, हुजूर, मुजरो, गुड मोर्निंग आदि तरह-तरह के संबोधन करते हैं। 'रत्नसंघ'' से जुड़ा हर व्यक्ति जय जिनेन्द्र से अभिवादन करे, यह मेरी हार्दिक अभिलाषा है। वैसे पूरे जैन समाज में 'जय जिनेन्द्र' अभिवादन का प्रचार-प्रसार व अनुपालन होना चाहिये। यह अभिवादन हमारे ऐक्यभाव और सांस्कृतिक भाव को पुष्ट करता है।

उपर्युक्त पंचसूत्रीय कार्यक्रम जीवन के लिए उपयोगी तो होगा ही, साथ ही अन्य लोगों के लिए मिसाल बनेगा। सबसे मेरा अनुरोध है कि इस पाँचसूत्री कार्यक्रम का सर्वत्र प्रचार-प्रसार तथा अनुपालन करें।

आज मैं जो कुछ भी हूँ, उसका प्रमुख कारण पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्ती की अनूठी कृपादृष्टि है। उनकी भावना थी कि मैं संघ का कार्यभार

संभालूँ। लेकिन उस समय मैं मेरा मन नहीं बना सका। इस वक्त संघ के सभी कार्यकर्ताओं ने, विशेष रूप से संघाध्यक्ष श्री मोफतराजजी मुणोत व संरक्षक श्री नथमलजी हीरावत ने मुझे इस जिम्मेदारी को स्वीकार करने हेतु बहुत जोर देकर प्रेमपूर्वक कहा, जिसे मैं टाल नहीं सका। आप सबके अपार स्नेह से मैं अभिभूत हूँ। हम सभी का जिनशासन के प्रति प्रेम, गुरु के प्रति श्रद्धा और संघ के प्रति समर्पण बढ़ता रहे।

(मोक्षद्वार ज्ञान पत्रिका, बेंगलूरू के 16-9-2013 के अंक में प्रकाशित)

3. प्रवचन प्रभाकर आचार्यश्री हीरा

आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म. सा. एक उत्कृष्ट वक्ता और श्रेष्ठ प्रवचनकार हैं। किसी एक विषय को लेकर उसका सुन्दर प्रतिपादन करना उनकी मौलिक कला है। रोज नये-नये विषय का चुनाव करना उनकी विशेषता है। जलगाँव चातुर्मास के दौरान चार माह तक आचार्यश्री के प्रवचन सुनने का मुझे सौभाग्य मिला। उसके बाद धूलिया में भी उनके प्रवचनों का लाभ मिला। इतने प्रवचनों में कहीं भी विषयों का दोहराव नहीं हुआ। मुझे लगता है कि उत्कृष्ट गुरुसेवा तथा गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के आशीर्वाद के फलस्वरूप ही उनके प्रवचन इतने प्रभावशाली, नित नये और आकर्षक होते हैं।

प्रायः वक्तागण अपनी बात अन्तिम श्रोता तक पहुँचाने के लिए जोर लगाकर बोलते हैं तथा माइक का सहारा लेते हैं। लेकिन आचार्यश्री बिना माईक अपनी ओजस्वी वाणी से अन्तिम श्रोता तक अपनी बात पहुँचा देते हैं। माइक के उपयोग का तो सवाल ही नहीं, उन्होंने माइक की अनुमोदना भी कभी नहीं की। उनके प्रभावशाली प्रवचनों से प्रभावित होकर कवि श्री जीतमलजी चौपड़ा ने उनको 'प्रवचन प्रभाकर' सम्बोधन दिया था।

आचार्यश्री परम्परावादी हैं। नियमों में शिथिलता को उन्होंने कभी

मंजूर नहीं किया। संघ की प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए वे प्रतिपल अप्रमत्त और तत्पर रहे। कोई भी व्यक्ति संघ या संघस्थ चारित्रात्माओं पर अंगुली न उठाये, इस बात का उन्होंने हमेशा पूरा खयाल रखा है। मैं छह वर्षों तक राष्ट्रीय अध्यक्ष पद पर रहा और बाद में नौ साल से शासन सेवा समिति से जुड़ा हूँ। इन पन्द्रह वर्षों में आचार्यश्री ने समस्त संघीय मर्यादाओं को दृढ़ता के साथ कायम रखा और संघ के गौरव में चार चाँद लगाये। सन्त-सतियों की रत्नत्रय की आराधना उत्कृष्ट होती रहे, इस बात पर वे सदैव सजग रहे हैं। चारित्र-धर्म में जब कभी कहीं कमी नजर आई तो कठोर निर्णय भी लिये। उनका मार्गदर्शन और नेतृत्व संघ को सदा मिलता रहे।

(नवम्बर 2013 के 'जिनवाणी' के आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र दीक्षा अर्द्धशताब्दी विशेषांक में प्रकाशित)

4. गुरुकृपा

एक दिन रात को 9 बजे शोरूम में एक हेलोजिन लेंप के टेढ़ा हो जाने से ट्रांसफॉर्मर जलने लगा। छत पर रखे प्लास्टिक बॉक्स भी जलने लगे। प्लाईवुड के टुकड़े भी जलने लगे। शोरूम मंगल करने का वक्त था। जलने की गंध आने से उसी वक्त आग का पता लग गया। थोड़े से प्रयत्न से मामला नियंत्रण में आ गया। मैं यह सोचता हूँ कि अगर शोरूम मंगल हो गया होता और यह घटना उसके बाद हुई होती तो क्या होता?

रिमोट कंट्रोल से मेरे रूम में मच्छरदानी करटेन वगैरह चलते हैं। कई बरस रिमोट वापरने के बाद खराब होने लगे तो हमने सारे रिमोट कनेक्शन तोड़ दिये व उसका उपयोग करना बंद कर दिया। परन्तु स्नानघर के सामने के कपाट में मोटर थी। भूल से मोटर का बटन चालू रह गया। मोटर रात को 12 बजे जलने लगी। जलने की गंध आने लगी। पूरा रूम धुएँ से भर गया। एकदम घनघोर घटा की तरह वातावरण होने से नींद खुली। देखा तो कपाट के अंदर का भाग धुएँ से पटा हुआ था। इतनी आग फैल जाने से सब

भयभीत हो गये। पानी से आग बुझाई। इलेक्ट्रिशियन को बुलाया और मोटर के कनेक्शन तोड़े। सोचता हूँ कि अगर उस दिन हम रूम में नहीं होते तो क्या होता ?

लम्बे स्टेण्ड वाले कई पंखे घर व दुकान में हैं। रखरखाव ठीक नहीं होने से पंखे जल्दी ही खराब हो जाते हैं। करीब 24 पंखे इस तरह के हैं। खराब पंखा किसी ने चौके में लगा दिया। बटन चालू किया, लेकिन पंखा चालू नहीं हुआ। चालू करने वाला उसे वैसा ही छोड़कर चला गया। बटन बंद करना भूल गया। पंखा रात को जलने लगा। करीब 2 बजे सुभाष पानी पीने उठा। जलते हुए पंखे के पास ही सोफासेट वगैरह सामान रखा हुआ था। उसने प्रयत्न करके पंखे का स्विच-ऑफ किया, वायर निकाला। मैं सोचता हूँ, अगर सुभाष रात को उठा हुआ नहीं होता तो क्या होता? जीवन में ऐसी अनेक दुर्घटना होती हैं, जो देव-गुरु-धर्म के प्रति आस्था तथा गुरुकृपा से टल जाती हैं। इसलिए आस्था का रास्ता कभी नहीं छोड़ना चाहिये।

5. दान की महिमा

संचित की हुई सम्पत्ति भी दैव के कुपित होने पर नष्ट हो जाती है, इसलिए धन का संचय करके रखने के बजाय दान करते रहना चाहिए। जिसके कर कमलों में दान रूपी अमृत है, जिसके मुखारविन्द में वाणी रूपी सरस सुधा है, जिसके हृदय कमल में दया का पीयूष निर्झर बह रहा है, वे श्रेष्ठ मनुष्य तीन लोक में वन्दनीय, पूजनीय हैं।

जिसके कर कमल में दानामृत हो, वह मनुष्य वन्दनीय और पूज्य बन जाता है। दान रूपी अमृत हजारों-लाखों मनुष्यों को जीवन देता है। रोते हुओं को हँसा देता है। रुग्ण शय्या पर पड़े हुए रोगियों को स्वस्थ एवं रोगमुक्त कर देता है। पीड़ितों में नई जान डाल देता है। भूखों-प्यासों की भूख-प्यास

मिटाकर उन्हें नया जीवन दे देता है। संकटग्रस्तों को संकटमुक्त करके हर्ष से पुलकित कर देता है। सचमुच दान संजीवनी बूटी है, अमृतमय रसायन है, रोगनाशिनी अमृतधारा है, अद्‌भुत शक्तिवर्धक औषधि (टॉनिक) है, दरिद्रतानाशक कल्पतरू है, मनोवांछित पूर्ण करने वाली कामधेनु है। दान में आश्चर्यजनक चमत्कार है। यह वशीकरण मंत्र है, आकर्षक तंत्र है और प्रेमवर्धक यंत्र है।

दान देने वाले और दान लेने वाले, दोनों अमृत को प्राप्त करते हैं। दान वास्तव में मानवजीवन के लिए अमृत है। जब मनुष्य भूख से पीड़ित हो, प्यास से छटपटा रहा हो, बाढ़ या भूकम्प आदि प्राकृतिक प्रकोपों से व्यथित हो, उस समय उसे मिला हुआ दान क्या अमृत से कम है? वह दान मानव को अमृत की तरह संजीवित कर देता है। दाता के हाथ सदा ऊपर रहते हैं। यहाँ तक कि बड़े-बड़े कलाकारों, पण्डितों, विद्वानों एवं वैज्ञानिकों के हाथ भी दानियों के गौरवशील हाथ के नीचे ही रहते हैं। लेकिन ऐसा सोचकर दाता को अहंकार नहीं करना चाहिये।

नीतिकारों ने कहा है कि जिस प्रकार नदियाँ अपना जल स्वयं नहीं पीतीं, पेड़ पौधे अपने फलों का उपभोग स्वयं नहीं करते, मेघ अपने जल से पैदा हुए धान्य को स्वयं नहीं खाते; उसी प्रकार सज्जनों का वैभव भी परोपकार (दान) के लिए होता है। एक विचारक ने कहा कि प्रार्थना के लिए सौ बार हाथ जोड़ने की बजाय, दान के लिए एक बार हाथ खोलना अधिक महत्त्वपूर्ण है। ज्ञानियों ने कहा कि हाथ का भूषण दान है, कंठ का आभूषण सत्य है, कान का आभूषण शास्त्र-श्रवण है। ये आभूषण हों तो दूसरे बनावटी आभूषणों से क्या प्रयोजन है?

एक जगह एक कुत्ता घर में घुसा और ज्योंही वह भोजन सामग्री में मुँह लगाने लगा कि घर के मालिक की निगाह पड़ गई। उसने कुत्ते को घर से बाहर निकाल दिया। यह देखकर एक सन्त ने कहा कि कुत्ता जब मनुष्य था, जब

उसके दोनों हाथ देने लायक थे, तब उसने हाथों से दान देकर अपने हाथ सार्थक नहीं किये, इसलिये मरकर अब कुत्ता बना। जिसे न तो वैसे दान के योग्य हाथ मिले, न दान देने की बुद्धि मिली। मनुष्य जन्म में दान देकर वह गॉड (भगवान) बन सकता था, किन्तु दान न देने से वह मरकर डॉग (श्वान) बना।

भगवान महावीर ने गृहस्थ को संसार के दुःखितों, पीड़ितों, भूखों-प्यासों और जरूरतमंदों के साथ सहानुभूति, आत्मीयता और एकता स्थापित करने और उनके सुख-दुःख में संविभागी बनने की दृष्टि से श्रावक के लिए अतिथि संविभाग व्रत रखा है। इस दृष्टि से दान हृदय की उदारता का पावन प्रतीक है, मन की विराटता का द्योतक है और जीवन के माधुर्य का प्रतिबिम्ब है।

तीर्थङ्करों के वार्षिक दान से एक बात यह भी ध्वनित होती है कि नाशवान धन का त्याग करने से ही अविनाशी आत्मा की खोज हो सकती है। जो व्यक्ति इस नाशवान धन के मोह में पड़ा रहता है, उसे जरूरतमंदों को नहीं देता, वह धन उस प्रमादी व्यक्ति की इस लोक में या परलोक में रक्षा नहीं कर सकता। भगवान महावीर ने उत्तराध्ययन सूत्र में कहा 'वित्तेण ताणं न लभे पमत्ते, इमम्मि लोए अदुवा परत्था।'

भारत के ऋषियों का चिन्तन कहता है कि दान दो, पर लेने वालों को दीनहीन समझकर मत दो। उस समय भावना यह रहनी चाहिए कि प्रभो! यह सब तुम्हारा है, तुम्हें ही समर्पण कर रहा हूँ। यह कितनी गहरी और ऊँची भावना है।

हजारों-लाखों में से इने-गिने ही ऐसे मिलेंगे, जो दान तो करते हों, पर अपना नाम न चाहते हों। दान के साथ धन्यवाद की चाहत भी नहीं हो। धन्यवाद देना हो तो भगवान को दो, जिनकी कृपा से यह सब प्राप्त हुआ है अथवा समाज को धन्यवाद दो, जिसका ऋण उतारने का मुझे अवसर मिल रहा है।

ज्ञानियों ने मानव को समझाते हुए कहा कि कृपण के समान दानी संसार में न तो हुआ है और न ही होगा। क्योंकि वह अपने सारे धन को बिना छुए ही एक साथ दूसरों को दे देता है अर्थात् छोड़कर मर जाता है। वस्तुतः दान मानव जीवन का अनिवार्य धर्म है, इसे छोड़कर जीवन की कोई साधना सफल एवं परिपूर्ण नहीं हो सकती। दान के बिना मानव जीवन नीरस और मनहूस है, जबकि दान से मानव जीवन में सरसता, सजीवता और नन्दनवन की सुषमा आ जाती है।

दान व भाव

सभी धर्मों में भावों के आधार पर दान का वर्गीकरण किया है। दान को नापने और उसे निर्धारित करने का थर्मामीटर (मापदण्ड) भाव है। इसलिए दान में दी हुई वस्तु उतनी महत्वपूर्ण नहीं मानी जाती, जितनी महत्वपूर्ण दाता की वृत्तियाँ, भावना मानी जाती हैं। भावना से ही दान की किस्म का पता चलता है। चंदनबाला ने भगवान महावीर को सिर्फ मुट्ठी भर उड़द के बाकले बहराये थे, परन्तु उन थोड़े-से अल्पमूल्य उड़द के सीजे हुए बाकलों के पीछे भावना उत्कृष्ट थी, श्रद्धा चरम पर थी। इसी कारण उस दान के साथ देवों ने 'अहोदानं, अहोदानं' की उद्घोषणा की थी। एक गरीब से गरीब व्यक्ति भी शुद्ध, निःस्वार्थ और प्रबल भक्तिभावना से दान देता है तो चाहे उसकी देय वस्तु बहुत ही अल्प हो, अल्पमूल्य हो, सामान्य हो, मगर उस दान का मूल्य अत्यन्त बढ़ जाता है।

सात्विक दान

जिस दान में अतिथि का हित व कल्याण हो, जिसमें पात्र का विवेक रखा गया हो, जिस दान में श्रद्धा, भक्ति, प्रेम, आत्मीयता, अनुग्रह बुद्धि आदि समस्त गुण हों, उस दान को सात्विक दान कहते हैं। ऐसा सात्विक दानदाता और ग्रहणकर्ता दोनों का कल्याण होता है। इस दान में

धर्म का प्रकाश होता है। इस दान में भक्ति, श्रद्धा, स्नेह, समर्पण, सहानुभूति, आत्मीयता एवं अनुग्रहबुद्धि की प्रबलता के साथ स्वत्व विसर्जन होता है।

सात्विक दान के साथ सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस दान के पीछे दाता में ग्रहणकर्ता के प्रति या दान के फलस्वरूप किसी भी प्रकार के प्रतिफल की भावना नहीं होती। मैं यह दान दे रहा हूँ, मुझे भी समय पर ग्रहणकर्ता से मिलेगा या इस दान से मुझे स्वर्ग, यश, प्रतिष्ठा, या प्रसिद्धि मिलेगी, या इस दान से मुझे अमुक पद मिलेगा या अमुक सत्ता मिल जायगी या अमुक अफसर मेरे अधीन चलने लग जायेगा या दान के कारण अमुक विराधियों के मुँह बन्द हो जायेंगे, वे मेरे दोष प्रकट नहीं करेंगे; सात्विक दान में इस प्रकार के प्रत्युपकार की इच्छा का अभाव होता है। यहाँ अहंता का विसर्जन है। गंगा आदि नदियाँ जैसे समुद्र को अपना करोड़ों लीटर पानी देकर उसी में विलीन हो जाती हैं, वे अपना नाम, रूप एवं विशेषता भी खो देती हैं, इसी प्रकार जिस दान के पीछे दाता स्वयं अपनी ओर से अपना नाम, रूप एवं विशेषता का विलय कर दे, अपने अहंत्व एवं व्यक्तित्व को परमात्म-स्वरूप में विलीन कर दे, वही सात्विक दान होता है।

अनूठी दानवृत्ति

दुष्काल के कारण राजा रन्तिदेव ने 48 दिन का चौविहार उपवास किया। पारणे के वक्त आधी रोटी बची थी। वह रोटी भी एक महिला को उसके बच्चे के लिए दे दी। पानी पीने लगे तो चाण्डाल का कुत्ता जो पानी के बिना मर रहा था, उसे करुणा से पानी दे दिया। रन्तिदेव अपनी दिव्य विचारधारा में निमग्न थे तभी देव आकर उनकी उदारता व करुणा भावना की प्रशंसा करते हैं। संयोगवश रन्तिदेव की अनूठी दानवृत्ति एवं करुणामय तपश्चर्या के प्रभाव से शीघ्र ही अच्छी वर्षा हुई और सारा दुष्काल नामशेष हो गया।

कई बार राजाओं की आँखें वैभव विलास के मद में चूर होकर उन दीन-हीनों को नहीं देख पातीं। वे राज्य की बाहरी चमक-दमक और जी-हजूरियों की ठाकुर सुहाती देख सुनकर उसकी एवं जनता की वास्तविक स्थिति से परिचित नहीं होते। इसी कारण उन्हें ऐसे अभावग्रस्तों की पीड़ा देखकर भी सहायता के रूप में दान देने की प्रेरणा नहीं होती।

राजस दान

क्लेशपूर्वक देना तथा प्रत्युपकार के प्रयोजन से अर्थात् बदले में अपना सांसारिक कार्य सिद्ध करने की आशा से अथवा फल का उद्देश्य रखकर दिया जाने वाला राजस दान कहलाता है। राजस दान उत्साह, उमंग या उदारता से नहीं दिया जाता। राजस दान दान तो है, परन्तु सांसारिक कार्य के प्रयोजन से दिया जाता है। राजस दान में उन सब दानों की गणना हो जाती है, जो किसी प्रसिद्धि, नामवरी, वाहवाही अथवा यशकीर्ति लूटने की दृष्टि से दिया जाता है, अथवा जो दान लौकिक फलाकांक्षा की दृष्टि से दिया जाता है। राजस दान के बदले में कुछ पाने की या अर्थलाभ, पदलाभ, प्रतिष्ठालाभ, संतानलाभ या और किसी अन्य लाभ की इच्छा होती है। यह दान फलासक्ति युक्त होने से दान के वास्तविक फल पर पानी फेर देता है। ऐसी वृत्ति का व्यक्ति दान तो उतना ही करता है, जितना सात्विक वृत्ति का व्यक्ति करता है, लेकिन दोनों के दान के परिणाम में बहुत अन्तर होता है। सात्विक दान का फल कर्मों की निर्जरा हो सकता है। जबकि राजस दान का परिणाम फलाकांक्षा युक्त होने से कर्म निर्जरा नहीं होता, अधिक से अधिक पुण्य प्राप्ति हो सकता है।

दान और अहंकार

एक सेठ बहुत दानी थे। परन्तु साथ ही उन्हें अपने दान का अहंकार भी बहुत था। एक दिन उन्होंने अपनी माँ की पूजा-आरती सोने के चौरंग पर की। पूजा के लिए एक ब्राह्मण पंडित को बुलाया। ब्राह्मण के द्वारा पूजा

विधि पूर्ण होने के पश्चात् सेठ ने सोने का चौरंग ब्राह्मण को दक्षिणा में दे दिया और कहा, ''आज तक तुमने ऐसा त्यागी दानी कहीं देखा है।''

ब्राह्मण फक्कड़ स्वभाव का था। उसने सोने के चौरंग पर एक रुपया और रख दिया और बड़े हर्ष के साथ चौरंग व रुपया सेठ को लौटाते हुए कहा, ''ऐसा त्यागी आपने और कहीं देखा है?''

अन्यतम निधि दान

दान के समान अन्य कोई निधि नहीं है। जिसका धन दान के लिए नहीं, शरीर व्रत के लिए नहीं, ज्ञान आध्यात्मिक उपशम के लिए नहीं, उसका जन्म मात्र मरने के लिए ही है। दान धर्म चार पदों में प्रथम पद है। दान दरिद्रता व क्लेश का नाशक है। दान लोकप्रियता देता है। दान यश आदि का संवर्धन करता है। दान में प्रदत्त धन घटता नहीं है, अपितु अभिवर्द्धित होता है। जल निकालने पर कुआँ स्वच्छ और अभिवर्द्धित जल से युक्त हो जाता है। किसी को यदि कुछ देना हो तो उसे अवहेलना या अनादर पूर्वक नहीं देना चाहिये। जो धन सूर्यास्त से पूर्व याचकों को नहीं दिया जाता है, मैं नहीं जानता कि वह धन प्रातःकाल में किसका रहेगा। यह पृथ्वी वृक्षों, पर्वतों और समुद्रों से इतनी बोझिल नहीं है, जितनी उस व्यक्ति से है जिसका जन्म याचकों की इच्छापूर्ति के लिए नहीं हुआ है। इस संसार में हजारों वीर पुरुष हैं। कलाकार, पंडित और मुनिजन भी बहुत मिल जायेंगे। किन्तु इस संसार में ऐसा भव्य जीवन दुर्लभ है जो अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय धन को सहर्ष त्याग सकता हो। नीति में कहा गया है कि जिसके कर कमलों में दान रूपी अमृत है, जिसके मुखारविंद में वाणी रूपी सरस सुधा है, जिसके हृदय कमल में दया का पीयूष-निर्झर बह रहा है, वह श्रेष्ठ मनुष्य तीन लोक में वंदनीय है, पूजनीय है।

दिया हुआ सार्थक

सिकंदर को यह जानकर बहुत ही अफसोस हुआ, वह रोने लगा कि 'हाय! मैंने व्यर्थ ही लोगों को सताकर, उखाड़-पछाड़ करके इतनी दौलत इकट्ठी की और इतनी धरती पर कब्जा किया। यह तो यहीं धरी रह जायेगी। अन्ततः उसे एक विचार सूझा और उसने अपने लोगों से कहा, ''मेरी अर्थी निकाली जाये, उस समय मेरे दोनों हाथ उस जनाजे से बाहर रखें जायें, ताकि दुनिया यह नसीहत ले सके कि इतना धन या जमीन अपने कब्जे में करने के बाद भी इन्सान मरने के बाद खाली हाथ जाता है। साथ में कुछ नहीं ले जा सकता।'' उन्होंने ऐसा ही किया। निष्कर्ष यह है कि जो धन अपने हाथों से दान में दिया जाता है, वही सार्थक है, वही अपना है। धन का अगर दान के रूप में उपयोग नहीं किया जाता है तो वह मनुष्य को आसक्त, लुब्ध, कृपण, विलासी या पतित बनाकर नष्ट-भ्रष्ट कर देता है। यानी धन को खाने की बजाय धन मनुष्य को खा जाता है।

फायदे का सौदा

एक लड़के को उसके पिताजी ने सौ रुपये दान देने को कहा और बोला कि दान वहीं देना जहाँ से अधिक की प्राप्ति हो। रास्ते में उसे एक भूखा भिखारी मिला, जो कई दिनों से भूख से पीड़ित था। उसने उसको भोजन करने के लिए सौ रुपये दिये। भिखारी ने भरपेट भोजन किया। भोजन से तृप्त होने पर उसके चेहरे पर जो प्रसन्नता थी, उसे देखकर उस लड़के का मन बहुत आनंदित हुआ। वो घर पर आया। पिताजी ने पूछा सौ रुपये का दान कहाँ किया। पुत्र ने खुशी-खुशी बताया कि उसने एक भिखारी को भोजन कराया। पुत्र प्रसन्न और संतुष्ट लग रहा था। भूखे को भोजन करवाने से पुत्र को जो आनंद की अनुभूति हुई, उसे देखकर पिता स्वयं इतना प्रमुदित हुआ कि पिता ने इस बार पुत्र को 1000 रुपये दान करने के लिए कहा। पुत्र

बोला–''पिताजी! मैंने सौ रुपये दान किये, आपने मुझे हजार रुपये दिये, हुआ न फायदा?''

दान हो सतत

पैसा बचाना अच्छा है लेकिन उस पैसे से किसी को बचाना ज्यादा अच्छा है। रोजाना कम से कम एक रुपये का दान करो। जिस दिन एक रुपये का दान नहीं हो, उस दिन 100 रुपये का जुर्माना भरो। न अग्रिम, न बाकी; निरन्तर एक रुपये का दान चालू रखो।

6. परिग्रह के कष्ट

परिग्रह स्वयं रखना, ममत्व या स्वामित्व की बुद्धि रखकर दूसरे के यहाँ रखना, रखाना अथवा दूसरे को परिग्रह रखने की अनुमति, प्रेरणा या प्रोत्साहन अपनी सुखलिप्सा से देना, ये सब परिग्रह की कोटि में आते हैं।

परिग्रह को स्वयं ग्रहण करके, दूसरों से ग्रहण करवा कर या ग्रहण करने वाले को अनुमति, प्रोत्साहन, प्रेरणा या अनुमोदन प्रदान करके जीव दुःख से मुक्त नहीं होता। क्योंकि प्रथम तो अप्राप्त परिग्रह को प्राप्त करने की लालसा होती है, उसके लिए काफी प्रबंध करना पड़ता है, वह भी क्लेशकारक है। दूसरों का अधिक परिग्रह देखकर मन में लालसा जागती है, विषाद होता है। परिग्रह जोड़ने के लिए दूसरों की खुशामद करनी पड़ती है। कई प्रकार की झिड़कियाँ, गालियाँ, अपमान आदि सहने पड़ते हैं; वह भी दुःख कारक है। प्राप्त परिग्रह की रक्षा में भी कष्ट होता है। परिग्रह के उपभोग से भी तृप्ति नहीं होती, अतृप्ति और असंतोष का मानसिक दुःख होता रहता है। यदि प्राप्त परिग्रह को कोई नष्ट करता है, चुरा लेता है या अपने कब्जे में कर लेता है तो उसके कारण दुःख, क्लेश, अशांति आदि होती है। इसलिए परिग्रही को दुःख से छुटकारा नहीं होता। यह मेरा है, मैं इसका स्वामी हूँ; इस प्रकार मेरा और मैं का दाहज्वर जब तक रहता है, तब तक सच्चा सुख दूर रहता है। परिग्रह इतना

दुःखद होते हुए भी यश और सुख के लिप्सु मृदु जीव इस परिग्रह को अत्यन्त कष्ट सहकर भी ग्रहण करते हैं।

परिग्रही को अपने धन की रक्षा की चिन्ता रात-दिन लगी रहती है। चोर, डाकू, आग, पानी आदि का भय उसे सताता है। उसे सुख की नींद नहीं आती है। वह अपने परिजन, दुर्जन, राजा, मित्र, रिश्तेदार, शत्रु आदि से आशंकित रहता है। दूसरे के पास अधिक धन देखकर परिग्रही ईर्ष्या से जलता रहता है। वह दूसरों को अपने बराबर न देखने या नीचा गिरने की चिन्ता करता रहता है। अप्राप्त पदार्थ से भी उसे तभी सुख होता है, जब वैसा पदार्थ दूसरों के पास न हो। परिग्रही के मन में स्वार्थ भावना के कारण निष्ठुरता आ जाती है। वह अपने दुःख को अधिक महत्व देता है। दूसरों के दुःख की किंचित भी परवाह नहीं करता। जहाँ परिग्रह है, वहाँ प्रायः द्वेष, द्रोह, अभिमान, ईर्ष्या, स्वार्थ, कपट आदि दुर्गुण भी स्वतः आ जाते हैं। महापरिग्रही व्यक्ति प्रायः धर्माराधन, परमात्म-भक्ति, साधु-संतों की सेवा आदि से विमुख ही रहता है। अतः परिग्रह हिंसा आदि अनेक पापों का मूल है।

परिग्रह अनर्थ का मूल है। हिंसा, असत्य आदि अन्य अनेक पाप भी अनर्थ के मूल हैं। लेकिन परिग्रह मुख्य है, क्योंकि वह हिंसा, झूठ, चोरी, अब्रह्मचर्य, कषाय आदि का मूल कारण है। प्रश्नव्याकरण सूत्र में कहा है कि परिग्रह के लिए लोग हिंसा करते हैं, झूठ बोलते हैं, मिलावट करते हैं, तोल-नाप में गड़बड़ी करते हैं; लूट, चोरी, डकैती करते हैं, परस्त्रीहरण या परदारगमन करते हैं, अपने परिजनों के साथ छल-कपट करते हैं और लड़ाई करते हैं। बड़े-बड़े युद्ध भूमि और सम्पत्ति के लिए होते हैं। लाखों मनुष्यों को एकमात्र परिग्रह के लिए मौत के घाट उतार दिया जाता है। परिग्रह के लिए व्यक्ति अपने शरीर और स्वजन को भी कष्ट में डालता है। परिवार, समाज एवं राष्ट्र से द्रोह करता है, कलह करता है, दूसरे का अहित करता है, बुरा चाहता है, दूसरे का अपमान करता है। संसार में अधिकांश पाप परिग्रह के लिए ही किये जाते हैं।

परिग्रह द्वेष का घर है, धैर्य का नाशक है, क्षमा का शत्रु है, चित्त-विक्षेप का साथी है, मद का भवन है, ध्यान का कष्टदायी रिपु है, दुःख का जन्मदाता है, सुख का विनाशक है, पाप का निवास-स्थान है। परिग्रह दुष्ट ग्रह के समान बुद्धिमान पुरुष को भी क्लेश देता है और उसका नाश कर डालता है।

इन सब दृष्टियों से परिग्रह दुःख का स्रोत तथा दुःख-प्राप्ति का कारण है। यह तो हुई प्रत्यक्ष दुःख की बात। परोक्ष रूप से भी परिग्रह से ज्ञानावरणीय आदि अष्टविध कर्म-बन्धन तथा उनका असाता वेदनीय रूपी दुःख पैदा होता है। परिग्रही जीव परिग्रह से कर्म-बन्धन के फलस्वरूप नरक, तिर्यंच आदि नाना योनियों में भ्रमण करता हुआ नाना प्रकार के दुःख प्राप्त करता है। इस प्रकार परिग्रह से जीव प्रत्यक्ष रूप से इहलोक में नाना प्रकार के दुःख प्राप्त करता है और परोक्ष रूप से परलोक में भी उसे अनेक प्रकार के दुःख भोगने पड़ते हैं।

परिग्रह में सुख नहीं

शालिभद्र के घर पर 33-33 रत्नों से भरी पेटियाँ रोजाना स्वर्ग से आती थीं। अगर परिग्रह में ही सुख होता तो वे घर-बार, वैभव छोड़कर संयम धारण नहीं करते। जम्बूकुमार भर यौवन में अप्सराओं तुल्य आठ-आठ नव विवाहित रूप सुंदरियों को छोड़ सुहाग की पहली रात में संयम का संकल्प नहीं करते। करोड़ों-अरबों के दहेज, अखूट धन-वैभव को लात नहीं मारते। देवतुल्य स्वर्गीय वैभव को पाकर गुणसुंदर सेठ अपने आपको अनाथ महसूस नहीं करते। अपार धन वैभव के धनी वर्द्धमान राजपाट छोड़कर प्रभु महावीर नहीं बनते। उन्होंने इस सारे वैभव, घरबार को अनित्य समझा, दुःखदायी माना, फलस्वरूप आत्म-कल्याण के लिए निकल पड़े। उनका वैभव अंबानी बंधु, मित्तल, टाटा, बिड़ला, बुश, बिल क्लिंटन, बिल गेट्स से कितना अधिक था, गणित के अंक इसकी गणना नहीं कर सकते।

इस सारे वैभव को महान आत्माओं ने अनर्थ की जड़ समझा। परिग्रह द्वेष का घर है। धैर्य का नाशक है। क्षमा का शत्रु है। चित्त-विक्षेप का साथी है। मद का भवन है। ध्यान का रिपु है। दुःख का जन्मदाता है। सुख का विनाशक है। पाप का खास निवास स्थान है। परिग्रह दुष्ट ग्रह के समान बुद्धिमान पुरुष को भी क्लेश देता है व आखिर उसका नाश कर डालता है। कुबुद्धि और अज्ञान के कारण जो मनुष्य पाप कर्मों से धन को अमृत के समान समझकर ग्रहण करके संचय करते हैं; स्त्री, पुरुष आदि के पाश में फँसे हुए और वैर भाव की शृंखला में जकड़े हुए वे मनुष्य अंत समय में धन को यहीं छोड़कर नरक को प्राप्त करते हैं। उत्तराध्ययन सूत्र (19/98) में भगवान महावीर कहते हैं-

वियाणिया दुक्ख विवद्धणं धणं ममत्तबंधं च महाब्भयावहं।
सुहावहं धम्मधुरं अणुत्तरं धारेह निव्वाण गुणावहं महं।।

हे भव्य पुरुषो! धन को दुःख बढ़ाने वाला, ममत्व रूपी बंधन का कारण तथा महाभय को प्राप्त कराने वाला जानकर सुखों को देने वाली प्रधान एवं महान ज्ञान दर्शनादि गुणों को और मोक्ष को देने वाली धर्म रूपी धुरा को धारण करो अर्थात् धर्म के लिए पुरुषार्थ करो।

ड्रम खाली रखें

एक व्यक्ति नाव में सफर कर रहा था। उसको तैरना नहीं आता था, अतः नाविक ने उसको एक खाली ड्रम दिया और कहा कि कभी सागर में तूफान आये तो इसे कमर से बाँध लेना, तुम डूबने से बच जाओगे। उस व्यक्ति के पास परदेश में कमाया हुआ काफी धन स्वर्ण मोहरों के रूप में था। संयोग से सागर में तूफान आया। शेष यात्रियों को तैरना आता था। एक-एक करके सभी उतर गये। वह व्यापारी अकेला बचा था। उसका जीव स्वर्ण मोहरों में अटक रहा था। उसने ड्रम का ढक्कन खोला, उसमें स्वर्ण मोहरों

को भरकर ऊपर से ढक्कन लगा दिया और कमर से ड्रम बाँधकर समुद्र में कूद पड़ा। देखते ही देखते वह समुद्र में डूब गया। जिसका ड्रम खाली है, वही बच सकता है। धन, सम्पत्ति, पैसा, परिवार कोई काम नहीं आता।

अभिशप्त अमीरी

परिग्रह अपने साथ परेशानी लाता है। शिकागो में 1923 में एक बड़ी होटल में विश्व के अमीर व्यक्तियों की मीटिंग हुई, जिसमें चार्ल्स, हारवर्ड, सेम्युअल, बिटले और जॉन फ्रेजर उपस्थित थे। उन अमीर व्यक्तियों के जीवन का अन्त इस प्रकार हुआ–

1. दुनिया की सबसे बड़ी लोहा कम्पनी के प्रधान चार्ल्स दिवालिया होकर मरे।
2. अमेरीका की नेशनल बैंक सीटी के प्रधान हारवर्ड पागल होकर मरे।
3. सबसे बड़ी गैस कंपनी के प्रधान सेम्युअल भिखारी होकर मरे।
4. न्यूयार्क स्टॉक एक्सचेंज के चेयरमेन मि. बिटले जेल में मरे।
5. अमेरीका की हाल स्ट्रीट के गोदाम के मालिक मि. जान और समस्त देशों की सेंट्रलमेंट बैंक के प्रधान मि. फ्रेजर की मृत्यु आत्महत्या से हुई।

भगवान महावीर ने कहा था 'वित्तेण ताणं न लभे पणत्ते' (उत्तराध्ययन सूत्र 4/5) अर्थात् व्यक्ति धन कमाता है, लेकिन वह उसके लिए त्राण नहीं बनता है। उपर्युक्त उदाहरण यही सिद्ध करते हैं।

परिग्रह से हुए अनर्थ

- औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को कैद कर जेल में डाला व 1657 में अपने दो भाइयों सहित तीनों को मौत के घाट उतार दिया।

- कोणिक ने हार और हाथी के लिए लाखों निरपराधों की हत्या कर दी।
- मोहम्मद गजनवी ने भारत में कई बार आक्रमण कर मंदिरों से अखूट सम्पत्ति लूट कर हजारों भारतीयों का खून किया।
- जॉर्ज बुश ने तेल से सम्पत्ति अर्जन करने के लिए इराक पर हमलाकर हजारों सैनिकों व हजारों नागरिकों का संहार करवा दिया।
- सिकंदर ने विश्वविजेता बनने के लालच में लाखों नारियों का सिन्दूर साफ कर दिया।
- हिटलर ने शहंशाह बनने की ख्वाहिश में लाखों अबोध नागरिकों के प्राण ले लिये।
- मुसोलिनी ने खूनी बनकर हजारों मानवों को मौत के घाट उतार दिया।
- सूर्यकांता रानी ने परिग्रह के लिए जीवन के सर्वस्व प्राण प्यारे पति के प्राण लेने की तैयारी कर दी।
- कौरवों ने अपने सभी बांधवों को मारना मंजूर कर लिया, पर एक इंच जमीन देना मंजूर नहीं किया।

7. तब तू क्या करेगा?

अरे बुद्धिमान मानव! जब शरीर रोगों से गिर जायेगा। अपने प्रियजनों के अनेक प्रकार के उपचार, उपाय निष्फल हो जायेंगे। वैद्य, डॉक्टर अपने अन्तिम उपायों की अजमाइश कर हाथ खींच लेंगे। सारे सम्बन्धी रोने लगेंगे। अन्तिम घड़ियां गिनी जाती होंगी, तब तू क्या करेगा?

श्वासों में रुकावट होने लगेगी। नाड़ियों की गति बदल रही होगी। कोई दूसरे लोक के नगारे बजते होंगे। दशों दिशाओं में दृष्टि पथरा जायेगी। रक्षण करने वाला कोई नहीं दिखेगा। तब तू क्या करेगा?

पाप की पोटली बांधकर पैदा किये धन के भंडार, बड़े-बड़े बंगलों/ कोठियों, बड़े-बड़े बगीचों, बड़े-बड़े कारखानों से एक क्षण में जुदा होने का अचानक अवसर आयेगा, तब तू क्या करेगा?

माथे टाट पड़ेगी, कानों से कम सुनाई पड़ेगा, आँखों से सूझना कम होगा, नाक से पानी टपकता रहेगा, मुँह से लार टपकती होगी, खाँसी से छाती भर आयेगी, हाथ-पाँव की शक्ति क्षीण होगी, कमर झुक जायेगी, लकड़ी के सहारे चलना पड़ेगा, सभी धुतकारने लगेंगे, सर्वथा पराधीन हो जायेगा, जीवन खारा हो जायेगा, स्वभाव चिड़चिड़ा हो जायेगा, दुःखों से छूटने के लिए मरने की इच्छा का प्रसंग आयेगा, तब तू क्या करेगा?

प्राणप्रिय पत्नी, सुकुमार बच्चे और स्नेही-सम्बन्धियों के माने हुए मीठे सम्बन्धों से हमेशा के लिए जुदा होने का भयानक समय सामने आयेगा, तब तू क्या करेगा?

अरे विचारशील! यह सब नाटक रोजाना दुनिया में देख रहा है। भले आदमियों की भी यह स्थिति होती है, जो तेरे देखने में आती है। जवानी के जोश और धन के मद में झूमने वालों के इस जन्म में भी बुरे हाल होते देखे हैं। तेरी यह दशा नहीं होगी, ऐसे गलत विश्वास से भूलकर मत बैठना। ऐसे विषम प्रसंग में दीनता न आने लगे, रोना न पड़े, अशांति में भी शांति का अनुभव बना रहे, इसके लिए अभी से कुछ विचार कर ले।

जब ये पापकर्म तुम्हारे बनते हुए जीवन नीड़ को, तिनके-तिनके को अनजानी हवाओं के हवाले करेगा। जब ये पापकर्म अपने अभ्यस्त हाथों से तुम्हें सरसब्ज बाग दिखाकर, उस बाग में कोई फूल खिले, कोई कोयल चहके, कोई पुष्प खिले, उसके पहले ही उस बाग के पात-पात को नोंच डालेगा, तब तू क्या करेगा?

जब वे पापकर्म तुम्हारे सपनों के शीश महल के काँच-काँच को तोड़ देगा, तब तू क्या करेगा? जब वे दुष्कर्म तेरी असंख्य आकांक्षाओं की दुनिया उजाड़ डालेंगे, तब तू क्या करेगा?

पाप से नरक में यंत्रणा, वेदना भोगनी पड़ेगी। कुंभीपाक में भयंकर कष्ट भोगने पड़ेंगे। तिर्यंच गति में असह्य पीड़ायें भुगतनी पड़ेंगी। हे जीव! तब तू क्या करेगा?

पाप कर्मों में सारा जीवन बिताया। क्षण-क्षण व्यर्थ गँवाया। तपस्या नहीं की। व्रत-नियमों का पालन नहीं किया। अठारह पापस्थानों में झूमता रहा। हिंसा, झूठ, चोरी, दुराचार, क्रोध, अहंकार, छल, कपट, मायाचार, लोभ, लालच में डूबा रहा। सत्कार्य किया नहीं। रात्रि-भोजन करता रहा, दिन भर चरता रहा। पराई औरतों की ओर झाँकते रहा। व्यसनाधीन रहा। स्वजनों से झगड़ा करते रहा। सामायिक-स्वाध्याय में मन लगाया नहीं। ऐसे जीव को एक भव नहीं, भव-भव भटकना पड़ेगा। नरक की यातनायें सहन करनी पड़ेंगी। किलबिल-किलबिल करके मरना पड़ेगा। सगे-संबंधी, बन्धु-भगिनी कोई मदद नहीं करेंगे। चौरासी के चक्कर से छुटकारा नहीं मिलेगा। लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकेगा, हे जीव उस समय तू क्या करेगा।

याद रखना चेतन, ये पापकर्म बड़े निष्ठुर होते हैं। अतः पाप से सदा बचके रहना। साँप का काटा हुआ बच सकता है। पागल कुत्ते का काटा हुआ ठीक हो सकता है, परन्तु पाप का काटा हुआ जीव बचना मुश्किल है।

8. तब तेरा कौन होगा?

इस नश्वर शरीर में अनेक रोगों का आक्रमण होगा। स्नेही-सम्बन्धियों के सारे उपचार बेकार हो जायेंगे। बड़े-बड़े डिग्रीधारी डॉक्टर, वैद्य उपाय करते हुए भी निष्फल रहेंगे। निकट के साथी तेरे को देखकर चार आँसू निकाल लेंगे, लेकिन मदद नहीं कर पायेंगे। तब तेरा कौन होगा?

अन्तरमन बेचैन हो रहा होगा। श्वासोच्छ्वास की गति अटक रही होगी। कोई अकथनीय दशा चल रही होगी। चारों ओर से निराशा-निराशा के स्वर सुनने को मिल रहे होंगे। मनसूबे मिट्टी में मिल रहे होंगे। उस समय तेरा यहाँ कौन होगा?

पाप की परवाह किये बिना अनेक कुकर्म करके पैदा किये धन, मकान, बगीचे, मोटर, महल, मिलें, प्रेस आदि मनभावनी वस्तुएँ हमेशा के लिए छोड़ देने का समय अचानक आयेगा। तब तेरा यहाँ कौन होगा?

माता-पिता, भाई-भगिनी, स्त्री-पुत्र-पुत्रियाँ आदि का आनन्ददायक साथ जब छोड़ने का वक्त आयेगा, उस समय तेरा कौन होगा?

मान चाहे मत मान, तीन दुश्मन तेरे पीछे छल-छिद्र ढूँढ रहे हैं-रोग, बुढ़ापा और मृत्यु। इन तीनों में से एक के झपाटे में आ गया तो तेरा अभिमान चूर चूर हो जायेगा, इधर की सारी मेहनत व्यर्थ हो जायेगी। अन्दर से दिल से सोच! उस समय तेरा कौन होगा?

ऐ बुद्धि के भण्डार! इन सबका भी दबाव तुझे मोह की बेहोशी से न सूझता हो तो मैं कहता हूँ, उस समय तेरा साथी/संरक्षक एकमात्र धर्म होगा। दूसरा कोई सच्चा शरण न होगा। अतः जीवन उज्ज्वल बना लें। रोग के समय आर्त्तध्यान भुला दे। बुढ़ापे में दुत्कारे जाने की नौबत न आए और समाधिमरण मिले। ये सारी शक्तियाँ धर्म में हैं। हे मानव! जाग, अब भी नया सूर्योदय मानकर उत्तम प्रकार के धर्म की आराधना कर। आत्म-विकास के लिए धर्माराधना जीवन के प्रत्येक पल में होनी चाहिए। जगत के सभी साधनों से धर्म के साधन सर्वोपरि हैं। पूर्व में की हुई आराधना के प्रभाव से ही यहाँ आनन्द होता है। अगर यहाँ धर्माराधना के बिना जीवन व्यतीत करेगा तो संसार की अनन्त मुसाफिरी दुःखमय हो जायेगी।

9. तेरा क्या होगा ?

हे आत्मन! भवान्तर से लाई हुई पुण्य सामग्री को तू खा रहा है। नया उपार्जन करने के लिए तू व्यवस्थित उद्यम कर नहीं रहा है। तो परभव में तेरा क्या होगा ?

तू माया में फँसा, ममता में मारा गया, तृष्णा में बहा, आशा में उलझा। देख तो सही, जीवन जा रहा है। विचार करले, तेरा क्या होगा?

तू विषयों के अपवित्र खड्डे में गिरा, क्रोधादि कषायों के भयंकर जाल में फँसा, धर्म को हृदय में स्थान नहीं दिया। अरे आत्मन धर्म के बिना तेरा क्या होगा?

तू देवगुरु को अच्छे ढंग से पहचानता नहीं है। उनकी उत्तम सेवा से वंचित रहता है। धर्म की आवश्यकता पर ध्यान नहीं लगा रहा है। अरे आगे पीछे का विचार तो कर कि तेरा क्या होगा?

कंचन और कामिनी, इन दोनों को ही जीवन का आदर्श माना, इन्हीं के पीछे जीवन की शक्तियों को स्वाहा किया। श्रेष्ठ आत्म-तत्व को जानने और उसे जीवन में परिणत करने के लिए तू विचार ही नहीं करता है तो चेतन, सोच! तेरा क्या होगा?

पाँचों इन्द्रियों की पराधीनता में फँसकर मौज-शौक में लीन बनकर अनेक कर्मों में जाने-अनजाने बंध जाता है। अरे इन्द्रियों के गुलाम! तेरा क्या होगा?

व्यसन तुझे प्यारे लगते हैं। आरंभादिक में आगे बढ़ने को तू प्रगति मानता है। इन सब स्थितियों में हे जीव! तेरा क्या होगा?

प्रत्येक आत्मार्थी को एकान्त में अपनी आत्मा से इन प्रश्नों को पूछकर आत्मा से ही जवाब लेना चाहिये। तभी परम कल्याण की प्राप्ति होगी।

10. अब भी समझे तो अच्छा है

अय चिदानन्दघन आत्मन्! मोह की मदिरा में मस्त बनकर मूर्खतापूर्ण काम तूने बहुत-से किये, अब समझ जाय तो अच्छा है।

इन्द्रियों का गुलाम बना। मन को छुट्टा छोड़ा। व्यसनों से प्यार किया। विषयों की मौज में मस्त बना। सच्चा सुख ढूँढने का लेशमात्र उद्यम न किया। पग-पग में पराधीन बना। बचपन में माँ, जवानी में स्त्री, बुढ़ापे में कुटुम्बीजन याद आये; पर परमात्मा को याद नहीं किया। आत्मा को खोजने के लिए अन्तर्दृष्टि से काम लिया नहीं। बहुत भूला, खूब हैरान हुआ। अय कायर जीव! अब समझ जाय तो अच्छा है।

उन्मत्तता को छोड़। उल्टी राह से पीछे लौट। प्रभु का प्यारा हो। सन्त समागम की शोध कर। पाप से डर। सदाचारों का सेवन कर। तत्त्वज्ञान पैदाकर। आत्म-रसिक बन। हे प्राणी! अब समझ जाय तो अच्छा है।

मृत्यु निश्चित है। कालगति की किसी को खबर नहीं है। पूर्व के पुण्य से यहाँ लीला लहर है। जब पुण्य खत्म होगा तो धक्का लगेगा। सभी को छोड़ मर जाना निश्चित है। फिर भी नश्वर चीजों के लिए तेरा कितना प्रयास? आत्मा के लिए कुछ नहीं? अब समझ जाय तो अच्छा है।

दुर्लभ मनुष्य जन्म मिला। परमात्मा बनने के सारे साधन मिले। फिर भी अपनी अज्ञान दशा के कारण भूला-भूला भटकता है। प्रभु से दूर-दूर होता जाता है। अनन्त काल से दुःख के गड्ढे में डूब रहा है। दुःख के मार्ग से हटकर परम शांति के पथ में आने के लिए अरे जीव! अब समझ जाय तो अच्छा है।

तीनों काल में धर्म के बिना सुख-शांति नहीं मिलेगी। इस जीवन में धर्म की सम्पूर्ण आराधना करने के लिए कटिबद्ध हो। कल्याण की साधना स्वयं के हाथ की बात है। आराधक भाव को खूब सजाकर परम मंगलमय

बनाने को तैयार हो। उत्तम आशय के साथ यदि आत्मतारक धर्मानुष्ठान स्वीकार करेगा तो अनुक्रम से उच्च दशा को पायेगा।

11. आत्म-चिन्तन

प्रतिदिन प्रातःकाल अपने आपसे प्रश्न पूछना चाहिये कि मैं कौन हूँ? मैं शरीर नहीं हूँ, पर शरीरधारी आत्मा हूँ। शरीर से भिन्न अनन्त ज्ञान व सुख का भण्डार अविनाशी आत्मा हूँ। मैं कहाँ से आया हूँ? चार गतियों से भटकते-भटकते कहीं से आया हूँ। ऐसा माना जाता है कि ज्यादा डरपोक व्यक्ति नरक से आता है, ज्यादा खाने वाला तिर्यंच गति से आता है, पाँच इन्द्रियों के विषयों में आसक्त मनुष्य गति से आता है और परिग्रह में आसक्त देव गति से आता है। मैं कहाँ जाऊँगा? इस जीवन में किये गये अच्छे या बुरे कर्मों के फलों को भोगने के लिए आयु पूर्ण कर चार में से किसी एक गति में चला जाऊँगा।

महारंभी, महापरिग्रही, मद्यमाँस का भक्षक और पंचेन्द्रिय प्राणी का वध करने वाला नरक गति में जाता है। माया, गूढ़माया, खोटा तोल-माप और झूठ बोलने वाला तिर्यंच गति में जाता है। प्रकृति से सरल, नम्र, करुणावान और ईर्ष्याभाव से रहित आत्मा मनुष्य गति में जाता है। सराग-संयमी, संयमासंयमी, बाल तपस्वी और अकाम निर्जरा करने वाला देवगति में जाता है। इन सबसे परे ज्ञान, दर्शन, चरित्र व तप का आराधक मोक्ष में जाता है।

मुझमें ऐसे कौन से गुण हैं कि जिनसे मैं आत्मप्रशंसा चाहता हूँ। मैंने कौनसा अद्‌भुत महान कार्य किया है, जिसके लिए मैं अहंकार करता हूँ। मेरे ऐसे कौनसे सुकृत्य हैं, जिनके कारण से मेरा नरक का डर मिट गया है। क्या मैंने यमराज को जीत लिया है, जिससे मैं निश्चिंत हो गया हूँ।

मैं क्या कर रहा हूँ? आत्मस्वरूप को भूलकर, शरीर के पोषण के लिए, पाँचों इन्द्रियों के सुहावणे विषयों को भोगने के लिए और इनके साधन

रूप धन कमाने के लिए रात-दिन उद्यम करता रहता हूँ। मेरे कर्त्तव्य क्या हैं? अठारह पापों का त्याग कर श्री जिनेश्वर देव की आज्ञानुसार उत्तम धर्म हमेशा करने योग्य हैं। मानव जीवन की सम्यक् साधना से आत्मा परमात्मा हो सकता है। अतएव परमात्म मार्ग में चलने के लिए मुझे उत्तम धर्म क्रिया और तत्त्व ज्ञान का अखंड अभ्यास अवश्य करना चाहिये।

12. जीवन का चिन्तन

- संभवतः 85 फीसदी लोग ऐसे हैं जिन्हें जीना पड़ रहा है। उनके जीने में कोई रस नहीं, कोई उत्सव नहीं, कोई नृत्य नहीं, कोई उत्सुकता और उमंग नहीं। पर ध्यान रखें, इसका नाम जिंदगी नहीं है। एक आदमी अस्पताल में पड़ा है और घसीट-घसीट कर जीता है। अस्पताल में जाकर देखें, वहाँ कई लोग बंधे हुए मिलेंगे। किसी की टांगें बंधी हैं, किसी के हाथ बंधे हैं, किसी को ऑक्सीजन दी जा रही है, किसी को ग्लुकोज दिया जा रहा है, किसी को सुअर का हृदय प्रत्यारोपित किया जा रहा है, किसी को नली से भोजन दिया जा रहा है। यह भी कोई जिंदगी है? यह तो गंदगी है!
- आदमी की स्थिति यह है कि सोमवार को जन्मा, मंगलवार को बड़ा हुआ, बुधवार को विवाह हुआ, गुरूवार को बच्चे हुए, शुक्रवार को बीमार पड़ा, शनिवार को अस्पताल में भर्ती और रविवार को चल बसा। बस यही आदमी की जिंदगी का एक चित्र है! पर ध्यान रखना, यह जिंदगी का विकृत और सबसे भद्दा चित्र है। इस चित्र में कोई खूबसूरती नहीं है। जिंदगी के चित्र में चरित्र की खूबसूरती चाहिये। फूलों का सार इत्र है और जीवन का सार चरित्र है। जिसने इत्र बटोर लिया उसने भेदविज्ञान पा लिया। पैदा हुए और वैसे ही मर गये तो दुनिया में आने का औचित्य ही क्या हुआ।

- यह संसार बहुत रहस्यमय है और इसमें रहकर ही हमें जिंदगी व्यतीत करनी है। शिक्षा एवं संस्कार के बल पर, प्रेम एवं बुद्धि के सहारे, मन और हृदय के सहयोग से, इहलोक एवं परलोक का विचार करके, प्रेय और श्रेय के स्पष्ट खयाल से, हेय और उपादेय की व्यवस्थित समझ द्वारा हम अपने जीवन को ऐसा बनाएँ कि अनंतकाल के बाद प्राप्त हुआ यह मानव जीवन सच्चे अर्थों में सार्थक बन जाय।

- परमात्मा परीक्षक है। यह दुनिया जिसमें आप रहते हैं, परीक्षा-भवन है। आपका जीवन उत्तर-पुस्तिका है। समय केवल तीन घंटे हैं। प्रश्नपत्र बँट चुके हैं। बालपन खत्म होते ही पहला घंटा बज चुका है, दूसरा घंटा जवानी खत्म होते ही बन चुका है। मृत्यु का तीसरा घंटा शीघ्र बजने वाला है। क्या आपको अनुत्तीर्ण हो जाने का डर नहीं है?

- जिन्दगी में लम्बाई का नहीं, गहराई का महत्त्व है। कितने साल जिए-यह महत्त्वपूर्ण नहीं है; बल्कि किस भाव, दशा और सुकून को लेकर जिए, यह महत्त्वपूर्ण है। श्रीमद् राजचन्द्र, संत ज्ञानेश्वर, तिलोकऋषि, शंकराचार्य, विवेकानंद, गणितज्ञ रामानुजन और भगतसिंह के जीवन बहुत ही छोटे थे, लेकिन उन्होंने उसमें भी वह कर दिखाया जो लोग सौ साल में भी नहीं कर पाते हैं। किसी ने सच कहा है, किसी की चार दिन की जिंदगी सौ काम करती है और किसी से सौ बरस की जिंदगी में कुछ नहीं होता।

- बुजुर्गों और युवाओ! बुढ़ापे से बचने के लिए चाहे हजार उपाय कर लिए जायें और जवानी को बचाने के लिए चाहे लाख उपाय कर लिए जायें तो भी जवानी जाती है और बुढ़ापा आता है। इसलिए

बुजुर्गों! बुढ़ापे को भुनभुनाते हुए जीने की बजाय गुनगुनाते हुए जिओ। युवाओं! जवानी को 'खाओ-पियो' के साथ जीने की बजाय 'जियो और जीने दो' के साथ जियो। जिंदगी को हर हाल में जीना है। मगर 'आह'' के साथ नहीं बल्कि 'वाह'' के साथ।

13. पुण्य और पाप

मानव जीवन की समस्त क्रियाओं के मूल में दो तत्वों की प्रधानता है-एक पुण्य और दूसरा पाप। शुभ कर्म पुण्य है। जीवन के सब प्रकार के सुख, यश, प्रतिष्ठा, रूप, यौवन, वैभव, परिवार आदि पुण्यकर्म के फल हैं। अशुभ कर्म पाप हैं। समस्त दुःखों के कारण हैं। रोग, दरिद्रता, बदनामी और अंगोपांग आदि की हीनता इत्यादि पापकर्म के फल हैं। संसार में सभी मनुष्य पुण्य चाहते हैं, पुण्य के फल की आकांक्षा रखते हैं। पाप का फल कोई नहीं चाहता। पाप-फल से सभी घबराते हैं। परन्तु मानव जीवन की यह विडम्बना है कि पुण्य का फल चाहने वाले पुण्य नहीं करते हैं और पाप के फल नहीं चाहते हुए भी पाप करते जा रहे हैं।

मैं धर्म को जानता हूँ, पर उसमें प्रवृत्ति नहीं कर पा रहा हूँ। अधर्म को भी जानता हूँ, पर उससे दूर नहीं हट पा रहा हूँ। इसलिये आचार्यों ने सद्गृहस्थ के लिए कहा कि यदि वह दुःख से डरता है; गरीबी, बीमारी और बदनामी से डरता है तो इनसे बचने के लिए उसे पाप से डरना चाहिये। सब दुःखों का मूल पाप है, अशुभ कर्म है। इसलिये श्रावक को पाप भीरू होना चाहिये।

जो आत्मा को पतन की ओर ले जाय, उसे पाप कहते हैं। जो पुण्य और भलाई का शोषण करे, शुभ कर्म रूपी बगीचे को सुखा दे, वो पाप है। जीव रूपी वस्त्र को जो मलिन कर देता है, वह पाप है। जिसे करने से मन

शंकित, भयग्रस्त एवं कलुषित होता है, समझना चाहिए वह पाप है। पाप चाहे छोटा हो या बड़ा, वह मन को अशांत बना देता है। जीवन में सुख एवं निर्भयता पर पाप आवरण की तरह छाया रहता है। पापी इहलोक व परलोक, दोनों में ही दुःखी एवं चिंताग्रस्त रहता है।

जीवन में पाप के प्रसंग अधिक आते हैं और पुण्य के कम। शास्त्रों में पुण्य के रास्ते नौ व पाप के अठारह बताये हैं अर्थात् पाप के रास्ते पुण्य से दुगुने। संसार में पतन के मार्ग ज्यादा हैं, बुराइयाँ ज्यादा हैं। इसलिये साधक को हर समय सावधान रहने की आवश्यकता है। पुण्य भोगने के मार्ग बयालीस हैं तो पाप भोगने के बयासी। किसी मकान में अपने लोगों के आने के रास्ते एक-दो हों और चोरों के आने के रास्ते अनेक हों और वो खुले पड़े हों तो मालिक को उसमें शांति से नींद नहीं आ सकती है। वह हर समय चिंतित रहेगा। इसलिये आत्म-साधक को हर समय पापभीरू बने रहना चाहिये।

पाप-पुण्य का खेल

विश्व में उत्थान और पतन का नाटक रोजाना नजरों के सामने देख रहे हैं। जिन सेठों के पत्थर पानी में तिरते थे, आज उनके पुत्र-पौत्रों के पास किराये का मकान भी नहीं है! स्थिति सदा एक सी नहीं रहती। जिन राजा-महाराजाओं का ऐश्वर्य देवों को भी लज्जित कर देता था, आज उनके महल खण्डहर बने हुए हैं। यह पाप-पुण्य का खेल हम आँखों से देख रहे हैं।

पुण्यार्जन भी करें

पैसा सुविधा दे सकता है, सलामत नहीं रख सकता। पुण्य, सुविधा भी देगा और सलामत भी रखेगा। इसलिए यदि पुण्य कम होने लगे तो चेत जाओ। घर में शक्कर कम होने लगे तो शक्कर की कोठी भरते चलो। अगर शक्कर पूरी तरह समाप्त हो गई तो आखिरी दिन आपको कैसा लगेगा। पुण्य

पूरी तरह समाप्त हो गये तो हाल बेहाल हो जायेंगे। कभी-कभी लोग कहते हैं कि खूब धर्म करने के बावजूद कैंसर हो गया। धर्म करने वाले का भी दिवाला निकल सकता है। धर्म करने वाले को दुःख क्यों होता है। यह सारा पुण्य और पाप का खेल है।

जीवन को उत्सव कैसे बनायें, अगर यह सीखना है तो गीता के पास जाओ और मृत्यु को महोत्सव कैसे बनाये, अगर यह सीखना है तो भगवान महावीर के पास जाओ। भगवान महावीर कहते हैं, मृत्यु मातम नहीं, महोत्सव है। मृत्यु को महोत्सव बनाने के लिए जीवन में पुण्य और धर्म का संचय करते चलो। जीवन में पुण्य नहीं होगा तो मौत बिगड़ जायेगी और धर्म नहीं होगा तो परलोक बिगड़ जायेगा। धर्म जीवन को सँवारता है, पुण्य मृत्यु को सँवारता है। अतः केवल पैसा ही मत कमाओ, कुछ पुण्य भी कमाओ ताकि मृत्यु के बाद भी जिन्दा रह सको। मृत्यु के बाद जिन्दा रहना आसान नहीं है, इसके लिए जीवन में कुछ सत्कर्म करने पड़ते हैं, जो इतिहास में अमिट छाप छोड़ते हैं। सत्कर्म करने से कर्म से मुक्ति, मोक्ष संभव है। मोक्ष और कुछ नहीं, बस मृत्यु के बाद जीते रहना ही मोक्ष है। दरअसल मृत्यु की मृत्यु हो जाना ही मोक्ष है। भगवान ऋषभदेव और महावीर अब हमारे बीच कहाँ हैं? फिर भी वे जिन्दा हैं। उनका नाम, यश और साधना-मार्ग अमर है।

14. मुँहपत्ती के लाभ

मुँहपत्ती बांधने के अनेक गुण हैं-जैन चिह्न, जीवरक्षा, पुस्तक या कहीं थूक नहीं लगता है, मुँह में अचानक मच्छर-मक्खी नहीं जाते हैं, कान की नसों का एक्यूप्रेशर होता है, सामायिक, स्वाध्याय-साधना का विवेक रहता है।

मुँह से जो सीधी (डाइरेक्ट) हवा निकलती है, वह सावन- भादवा की नदी की तरह तेजी से निकलती है। निकलने वाली हवा गरम होती है। बाहर की शीतल हवा में जब तेजी से गरम हवा आती है तो शीतल हवा के

जीवों की विराधना होती है। इसके विपरीत नाक (श्वासोच्छ्वास) की हवा बरहमासी नदी की तरह होती है। उसमें उफाण नहीं होता है। धीमी गति से चलती है, जिससे जीवों की विराधना होती है।

एक दिन मैं किसी के साथ प्रातःकालीन भ्रमण को गया। बात करते हुए अचानक एक मक्खी मुँह में आ गई। मैं बेचैन हो गया। दस-पन्द्रह मिनट थूक, कफ और खाँसी चली। आखिर मक्खी खाँसी के साथ वापस निकली तभी चैन पड़ा। मक्खी मर चुकी थी। मक्खी निकलते ही खाँसी बंद। तब मुझे मुँहपत्ती का महत्व पता चला।

भगवान ने उपाश्रय या स्थानक में जाते समय पाँच अभिगम बताये हैं, जिनमें उत्तरासन एक अभिगम है। उत्तरासन का आशय है, मुँहपत्ती लगाकर स्थानक में प्रवेश करना। आनंद श्रावक भगवान के दर्शन करने जाते समय उत्तरासन लगाकर जाते थे।

डोरे के अभाव में मुँहपत्ती का पूरा उपयोग नहीं हो पाता है। डोरे सहित मुँहपत्ती से कान की नसों का शरीर के लिए लाभदायक एक्युप्रेशर होता है। इसके अलावा संतों के समक्ष वन्दना के दौरान हाथ ऊपर-नीचे होते हैं। अगर मुँहपत्ती बांधी हुई नहीं रहे तो उसका उपयोग ठीक से नहीं हो सकेगा। जिस तरह केला छिलके से सुरक्षित रहता है, उसी तरह मुँहपत्ती से वाणी-विवेक बना रहता है।

किसी के दाँतों की बनावट सम नहीं होती है। मुँहपत्ती जितने समय तक लगाई जाय, उतने समय तक अशोभनीय दाँतों की दिखावट से बचा जा सकता है। इसी प्रकार मुँहपत्ती लगाने से दन्त रोग या दुर्गन्ध के दुष्प्रभाव को भी आवृत किया जा सकता है। हवा में विद्यमान कीटाणु, जीवाणु, बीमारियों के सूक्ष्म अणु, जो मुँह द्वारा मानव शरीर में प्रवेश करते हैं; मुँहपत्ती होने से उनका प्रवेश नहीं हो पाता है। इस प्रकार मुँहपत्ती बीमारियों से भी बचाती है।

15. पारसमणि

एक दरिद्र टूटी-फूटी झोंपड़ी में रहता था। दो-चार दिन भूखे रहने के बाद उसे एक-दो दिन की बासी रोटी मिली। किन्तु दाल-शाक आदि कुछ भी प्राप्त न हुआ। अतः वह एक पत्थर पर मिर्च पीसने लगा। इतने में एक विद्वान योगी ने द्वार पर जोर से आवाज लगाई। दरिद्र झोंपड़ी से बाहर आया और अश्रुपूरित नेत्रों से कहने लगा, ''आप देख रहे हैं, मेरे पास कुछ भी नहीं है। मैं तो स्वयं ही ऐसा भाग्यहीन हूँ कि दो दिन के रूखे-सूखे बासी टुकड़े खा रहा हूँ। बताइए! ऐसी विषम स्थिति में आपको क्या दे सकता हूँ। कैसे आपकी सेवा कर सकता हूँ।''

इतने में ही योगी की पैनी दृष्टि उस पत्थर पर पड़ी, जिस पर वह नमक मिर्च रगड़ रहा था। देखते ही योगी ने कहा, ''तेरे पास तो ऐसी अद्‌भुत सम्पत्ति है, जिसकी बराबरी धन कुबेर भी नहीं कर सकता।'' दरिद्र ने कहा, ''क्यों मेरी मजाक कर रहे हो?''

योगी ने वो पत्थर मँगवाया, जिस पर वो चटनी पीस रहा था। उसे अच्छी तरह देखा और कहा, ''जानता है यह पत्थर पारसमणि है, इसका स्पर्श होते ही लोहा सोना बन जाता है।'' उस दरिद्र को विश्वास न हुआ। योगी ने उसके विश्वास के लिए तुरंत अपने लोहे के चिमटे का उस पारसमणि से स्पर्श कराया तो वह चिमटा सोने का बन गया। दरिद्र तो अपने पत्थर का यह चमत्कार देखकर हक्का-बक्का रह गया। वह तुरन्त योगी के चरणों में गिर पड़ा और कहने लगा, ''आपने महती कृपा करके मुझे इस पत्थर का गुण बता दिया, वरना मैं तो इसे साधारण पत्थर ही समझ रहा था। योगी ने उससे कहा, ''तेरा शरीर भी पारसमणि है; चाहे वह किसी भी जाति, कुल, धर्म या देश का हो। इससे तू चाहे तो अपने जीवन को सोना बना सकता है। पर तू नासमझी के कारण कोयला बना रहा है। अब भी समझ जा, और इस शरीर से दानादि सत्कर्म करके जीवन को अमूल्य स्वर्ण बना ले।''

16. असली कार

एक पत्नी ने अपने भाई की शादी में पीहर जाने के पूर्व अपने पति से कहा कि उसे सोने का हार चाहिये। सोने का अच्छा हार 20 हजार रुपये से कम में आने वाला नहीं था। घर की आर्थिक स्थिति साधारण थी। त्रिया हठ कैसे पूरा करे, इस चिंता में वह उदास रहने लगा। उसके एक मित्र ने उसकी उदासी देखकर कहा, ''भाई! इतने निराश क्यों रहते हो? क्या चिंता है।''

उसने सारी बात कह सुनाई। मित्र ने एक उपाय बताया। किसी आर्टिफिशियल ज्वैलरी की दुकान पर चले जाओ, वहाँ तुमको हजार-पन्द्रह सौ रुपयों में अच्छा सोने जैसे चमकने वाला हार मिल जायेगा। तुम्हारी पत्नी को कहाँ मालूम चलेगा कि हार सोने का है या नहीं। उसको यह बात बहुत अच्छी लगी। उसने बाजार से हार खरीद कर अपनी पत्नी को दिया। पत्नी बहुत प्रसन्न हो गई। अपने भाई की शादी में हार पहनकर वह फूली नहीं समाती थी।

साल भर बाद उस पत्नी के बहन का संबंध एक रईस के घर पर तय हुआ। उसको शादी में जाना था। उसने पति से कहा कि इस दफा मुझे कार लाकर दो। पति परेशानी में डूब गया। अब नकली कार कहाँ से लाकर दे। हार तो नकली चल गया था, लेकिन नकली कार तो नहीं चल सकती थी। उसकी उदासी देखकर मित्र ने कहा भाई इसका कोई इलाज नहीं है। नकली हार गले में चमक सकता है, परन्तु नकली कार सड़क पर चलकर लक्ष्य स्थान को नहीं पहुँचा सकती।

संसार के सभी कार्य-कलापों में संसारी लोगों को धोखा दिया जा सकता है। परन्तु परमात्मा तक पहुँचने के लिए असली कार ही चाहिये। वहाँ दगाबाजी और छलकपट नहीं चल सकता। प्रभु परमात्मा को प्राप्त करने के लिए हमें असली और सच्चे प्रयत्नों का अवलम्बन लेना पड़ेगा।

17. परिश्रम

परिश्रम प्रकृति का वैद्य भी है। इसके पास प्रत्येक मानसिक तथा शारीरिक रोग का इलाज मौजूद है। हर प्रकार की मायूसी और हर तरह का गम सिर्फ काम में डूबकर भुलाया जा सकता है। खाली बैठे रहने से आप हर समय एक तो तरह तरह की चिंताओं से घिरे रहेंगे, दूसरे आपका शरीर श्रम के अभाव में रोगी हो जायगा। जो आदमी परिश्रमी नहीं, वह जीवन में कभी भी प्रसन्न नहीं रह सकता। प्रसन्नता का एकमात्र उपाय है परिश्रम।

परिश्रम के बिना प्रतिभा भी किसी काम नहीं आती। परिश्रम से बढ़कर मनुष्य का कोई साथी नहीं। केवल परिश्रम के बल पर ही अनेक साधारण बुद्धि वाले लोग असाधारण रूप से सफल हो जाते हैं। जबकि असाधारण बुद्धिवाले लोग केवल इस कारण असफल हो जाते हैं कि वे परिश्रम करने से कतराते हैं।

परिश्रमी यानी मेहनती आदमी न दिन देखता है न रात। बस हर समय अपने काम में जुटा रहता है। आराम तो उसके लिए हराम होता है। सुनते हैं, नेपोलियन अपने घोड़े की पीठ पर बैठा-बैठा ही कुछ देर की नींद ले लिया करता था। ऐसे परिश्रमी व्यक्ति के लिए ही विश्वविजयी योद्धा बन पाना संभव हो सकता है। नेपोलियन के प्रसंग में ही एक घटना है। उसके एक सैनिक अधिकारी ने एक दिन कहा, ''मैंने दिन भर काम किया है।'' नेपोलियन को यह बात बुरी लगी। उसने फटकारकर कहा, ''अभी तो पूरी रात बाकी है। जाओ, काम करो।''

प्रतिभा किसी कार्य को शुरू तो करा सकती है, लेकिन उस कार्य को सफलतापूर्वक समाप्त करना परिश्रम का ही काम है। चाहे जिधर निगाह दौड़ा लें और चाहे जिस क्षेत्र के सफल तथा महान व्यक्तियों का नाम लें, हर कहीं आपको परिश्रम का ही फल दिखाई पड़ेगा। प्रत्येक महान उपलब्धि के

पीछे बरसों की मेहनत, दुःख, तकलीफें, भूख, प्यास तथा निराशायें छिपी हुई मिलेंगी। संसार के बड़े से बड़े लेखक, वैज्ञानिक तथा दार्शनिक किसी भी मजदूर से अधिक परिश्रम करके ही महान बन सके।

महापुरुष जिन ऊँची चोटियों पर पहुंचे और कायम रहे वहाँ वे अचानक उड़कर नहीं पहुंच गये। वे रात भर जाग-जाग कर मेहनत करते थे और पग-पग ऊपर चढ़ते थे। उस समय उनके साथ वाले खर्राटे भरते रहते थे।

18. सहअस्तित्व

हमें केवल अपने लिए ही घर नहीं बनाना। सिर्फ हमारा ही अकेला मकान, चाहे वह कहीं भी हो, क्या रहने योग्य होगा। हमारे घर के आसपास औरों के घर भी हों, तभी रहने का मजा है। और लोग हमारे पास रहना क्यों चाहेंगे? क्योंकि हम उनके दुःख-सुख में शरीक हो सकेंगे और हम यह काम तभी कर सकेंगे जबकि ईमानदार होंगे। हमें केवल घर ही नहीं बनाने, समाज की व्यवस्था भी बनानी है, व्यापार भी जमाना है, राजनीतिक व्यवस्था स्थापित करनी है। मानव-मानव के बीच स्वस्थ सम्बन्ध उत्पन्न करने है और अन्ततः जीवन के चरम लक्ष्य तक पहुंचना है। यदि हम यह सब कर लेते हैं तो हम न केवल दूसरों का जीवन ही सुखी और सफल बनाते हैं, बल्कि वास्तव में और परोक्ष रूप से स्वयं अपने जीवन को सुखी सफल बनाते हैं। क्योंकि हम अकेले नहीं रह सकते। जो व्यक्ति अकेला रह सकता है वह या तो देवता है या दानव, मानव नहीं हो सकता।

19. साधु-धर्म

लंबी संयम साधना में वो ही संलग्न होता है, जिसके मन में कर्मों से सर्वथा विमुक्त होने की अभिलाषा है। मोक्षार्थी व्यक्ति इस सत्य को भली भाँति जानता है कि आरंभ, समारंभ, विषय भोग में आसक्ति इत्यादि संसार परिभ्रमण के कारण है और इनमें संलग्न व्यक्ति का मन सदा अशांत रहता

है। इसलिये पूर्ण समाधि व शांति का इच्छुक व्यक्ति ही संयम की परिपालना कर सकता है। उत्तराध्ययन सूत्र (14/28) में दीक्षित होने वाला पुत्र अपने पिता से कहता है–

अज्जेव धम्मं पडि वज्जयामो, जहिं पवन्ना न पुणब्भवामो।
अणागयं णेव य आथि किंचि, सद्धाखमं णे विणइत्तु रागं।।

हे पिताजी! जिस धर्म को स्वीकार करके फिर जन्म ही नहीं लेना पड़े, ऐसे साधु धर्म को हम आज ही अंगीकार करेंगे। इस संसार में ऐसा कोई पदार्थ नहीं है जो इस जीव को प्राप्त नहीं हुआ हो। अतः राग भाव को दूर करके धर्म में श्रद्धा रखना एवं साधु धर्म को अंगीकार करना हमारे लिये श्रेष्ठ है।

20. सच्चा धार्मिक

वास्तविक सुख आन्तरिक शांति में है और आन्तरिक शांति चित्त की विकारविहीनता में है, चित्त की निर्मलता में है। चित्त की विकारविहीन अवस्था ही वास्तविक सुख–शांति की अवस्था है। अतः सच्ची शांति और सच्चा सुख वही भोगता है जो निर्मल चित्त का जीवन जीता है। जो जितना विकार–मुक्त रहता है, वह उतना ही दुःख–मुक्त रहता है, उतना ही जीवन जीने की सही कला जानता है तथा उतना ही सही मायने में धार्मिक होता है। निर्मल चित्त का आचरण ही धर्म है। यही जीने की कला है। इसमें जो जितना निपुण है, वह उतना ही अधिक धार्मिक है। धार्मिक की यह सही परिभाषा है।

21. कार्य–पूर्व तैयारी

काम के लिए पूरी तरह तैयार होना, अपने आपमें इतनी बड़ी बात होती है कि केवल इस प्रकार तैयार हो जाने भर से काम पूरा हो जाना निश्चित हो जाता है। लेकिन दुनिया में ऐसे बहुत थोड़े लोग हैं जो पूरी तरह

तैयार होकर अपने काम पर जाते हैं। पूरी तैयारी के बिना आप काम में अपनी अधूरी शक्ति, अधूरी क्षमता तथा अधूरा मन लगा पायेंगे। फलस्वरूप काम भी अधूरा ही कर पायंगे और इससे होगा यह कि जिस भी दफ्तर या कारखाने अथवा व्यवसाय में आप हैं उसकी दशा एक ऐसे बिजली घर जैसी हो जायेगी जिसके आधे जैनरेटर फ्यूज पड़े हों।

22. शरीर है मशीन

यों हमारे शरीर की मशीन इतनी कुशलतापूर्वक बनाई गई है कि यह छोटी-मोटी ज्यादतियाँ सह गुजरती हैं, लेकिन इस मशीन को सौ साल तक बेरोकटोक चलाते रहने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसके पुर्जों पर कभी भी चिन्ताओं की गर्द न जमने दें और सदा आशा और उमंग का तेल डालते रहने की कोशिश करते रहें, ताकि इस मशीन की किसी भी गरारी के दाँते घिसने न पायें।

ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध तथा भय के झटके दे देकर हम अपनी काम करने की लगन को कुंठित करते रहते हैं। धीरे-धीरे यह प्रक्रिया हमारे शरीर की मशीन को इस सीमा तक खराब कर डालती है कि इसमें मरम्मत की भी गुंजाईश नहीं रह जाती और होता यह है कि हम अपनी सारी की सारी योग्यताओं और प्रतिभा के बावजूद जीवन में कोई भी बड़ा काम किए बिना समाप्त हो जाते हैं।

23. चेहरे

हम खयाल करें कि चौबीस घंटे में कितने चेहरे बदलते हैं? चौबीस घंटे में चौबीस से भी ज्यादा चेहरे तो नहीं बदल लेते हैं? हमारे दो प्रकार के चेहरे होते हैं-एक निजी चेहरा होता है और दूसरा सार्वजनिक चेहरा है। जो व्यक्तिगत (निजी) चेहरा होता है, उसे हम सार्वजनिक स्थान पर नहीं ले

जाते। क्या हम हमारा असली चेहरा कभी किसी को दिखाते हैं? हमारे चेहरे पर चेहरे हैं और बहुत-बहुत गहरे हैं, अनगिनत मुखौटे हैं।

हम चेहरे बदलने में, रंग बदलने में बड़े होशियार हैं। बड़ी तेजी से चेहरे बदल लेते हैं। हम पत्नी के सामने कुछ होते हैं और मित्र के सामने कुछ और। बच्चों के सामने कुछ होते हैं और ग्राहक के सामने कुछ और। मालिक के सामने कुछ होते हैं और नौकर के सामने कुछ और। अगर हमारे एक तरफ मालिक को बैठा दिया और दूसरी तरफ नौकर को बैठा दिया जाय तो हमारे दो चेहरे होंगे। इधर नौकर की तरफ एक चेहरा नौकर को डाँटने का होगा तो उधर मालिक की तरफ दूसरा चेहरा पूँछ हिलाते हुए होगा।

24. मोक्ष की दूरी

मनुष्य क्षेत्र से मोक्ष की दूरी 7 रज्जू से कुछ कम है। एक रज्जू में असंख्य कोड़ा-कोड़ी योजन होते हैं। वह असंख्य क्षेत्र कितना? भगवती सूत्र में वर्णन मिलता है कि कोई एक देवता जो कि 3 चुटकी में जम्बुद्वीप (जो कि एक लाख योजन का लंबा-चौड़ा तथा जिसकी परिधि 3,16,227 योजन झांझेरी है) की 21 बार परिक्रमा कर लेता है। यानि लगभग 3 सैकण्ड में 67,00,767 योजन झांझेरी दूरी तय करता है। इस रफ्तार से यदि वह देव 6 महिने तक चले तो भी एक रज्जू के पार नहीं पहुँच सकता। उस देव के पास वैक्रिय लब्धि है।

मनुष्य के पास इस रफ्तार जितना तेज कोई साधन नहीं। पर मनुष्य इस दूरी को एक समय में पार कर सकता है। यह असंभव लगने वाला कार्य वह इस जिनवाणी के अनुसार अपने जीवन को ढालकर, समस्त कर्मों को खपाकर कर सकता है। यानि एक मात्र इस जिनवाणी के सहारे जीव एक समय में असंख्य योजनों की दूरी तय कर सकता है।

25. अनुत्तरित प्रश्न

एक युवक से पूछा गया, ''तुम क्या करते हो ?''

उसने कहा, ''मैं पढ़ता हूँ।''

फिर पूछा गया, ''क्यों पढ़ते हो ?''

उसने कहा, ''उत्तीर्ण होने के लिए।''

''उत्तीर्ण क्यों होना है ?''

''प्रमाणपत्र पाने के लिए।''

''प्रमाण पत्र क्यों चाहते हो ?''

''नौकरी के लिए।''

''नौकरी क्यों चाहिये ?''

''पैसा कमाने के लिए।''

''पैसा क्यों चाहते हो ?''

''खाने के लिए।''

''खाना क्यों चाहते हो ?''

''जीने के लिए।''

अन्त में पूछा गया, ''जीना क्यों चाहते हो ?''

इस प्रश्न पर वह चुप रह गया। क्योंकि अब उसके पास कोई जवाब नहीं था। दुनिया में ऐसे लाखों-करोड़ों लोग होंगे, जिनके पास इस प्रश्न का आज भी कोई जवाब नहीं है। जीवन की एक मंजिल व लक्ष्य होना चाहिये, तभी जिंदगी के कोई मायने हैं।

26. घर को स्वर्ग बनाने हेतु

1. बहुओं का सम्मान करना।
2. श्रम करने वालों की कद्र करना।
3. परिवार में एक दूसरे की बात नहीं काटना।
4. व्यसन और फैशन से घर-परिवार को दूर रखना।
5. परिवार में विनय व अनुशासन होना।
6. परिवार में सदाचार और संयम की साधना होना।
7. परिवार में प्रेम व सहिष्णुता होना।
8. परिवार में छोटी-छोटी बातों को तूल नहीं दिया जाना।

27. वाणी के आठ गुण

1. आवश्यकता होने पर बोलें। कम बोलें।
2. गर्व से नहीं बोलें।
3. आवेश में नहीं बोलें।
4. हल्के और तुच्छ शब्दों का प्रयोग नहीं करें।
5. साताकारी बोलें।
6. चतुराई से बोलें।
7. धर्मयुक्त बोलें।
8. मर्मकारी न बोलें।

28. आत्म-कल्याण

अनेक महापुरुषों ने केवल एक उत्कृष्ट कार्य या समर्पित साधना से अपना आत्म-कल्याण कर लिया। जैसे-

- भगवान महावीर ने राजा नन्दन के भव में 11 लाख 60 हजार मासखमण करके तीर्थङ्कर गोत्र उपार्जन किया।
- सुलसा ने शीलव्रत के बल पर अपना आत्म-कल्याण कर लिया।
- चंदनबाला ने भगवान महावीर को पारणे में उड़द के बाकुले बहराकर अपना कल्याण कर लिया।
- आचार्य हस्ती ने उत्कृष्ट संयम साधना करते हुए अंतिम समय में तेरह दिवसीय तप-संथारा करके अपना कल्याण कर लिया।

क्या हमने कभी अपने आत्म-कल्याण के लिए कोई कार्य निश्चित किया है?

29. संकेत

मरने पर यमराज के दरबार में हाजिर हुआ और पूछा, ''भगवन! न कोई सूचना, न पत्र, न टेलिफोन, एकदम क्यों बुलाया?'' यमराज बोले -

1. सर्वप्रथम बालों से शुरूआत की। बाल सफेद कर नोटिस भेजा कि चेत जा, पर तू नहीं समझा।

2. आँखों में मोतिया-बिन्द के संकेत से दूसरी सूचना भेजी, पर तू नहीं माना।

3. कानों से कम सुनाई दिया, पर तूने अपनी चलाई।

4. दाँतों पर वार किया, तोड़ने शुरू किये, तूने नये लगाये, पर ध्यान नहीं दिया।

5. हार्ट की नलियाँ बन्द कीं। तूने बाई पास कराकर फिर रास्ता निकाल लिया।

6. आखिर में वारंट भेजा।

इस प्रकार न जाने कितने जन्मों में क्या-क्या सुख-दुःख इस जीव ने भोगे हैं। यहाँ से विदाई के समय कहीं पशु जगत में जाने की तैयारी तो नहीं कर बैठे।

30. सुख का रहस्य

आपकी जेब में 90 रुपये हैं तो आपका प्रयास होता है कि 10 रुपये और मिल जायें ताकि पूरे सौ हो जायें। अब आप 90 रुपये का सुख नहीं भोगेंगे, लेकिन 10 रुपये का दुःख भोगेंगे, 10 रुपये के लिए दौड़-भाग करेंगे। दुनिया के लोग सिर्फ 10 रुपये के लिए भाग रहे हैं। बड़ा से बड़ा धनपति, सम्राट् और गरीब से गरीब व्यक्ति सिर्फ 10 रुपये के पीछे भाग रहे हैं। ऐसा नहीं है कि इनके पास कुछ नहीं है। है, 90 रुपये तो सभी के पास हैं, लेकिन सिर्फ 10 रुपये कम पड़ रहे हैं। और इन 10 रुपयों के पीछे बहुत भागना पड़ता है। दिन-रात एक करना पड़ता है। खून-पसीना एक करना पड़ता है। पाप, अत्याचार, बेईमानी, छल, फरेब, झूठ, रिश्वतखोरी, कालाबाजारी, मिलावट सब खटकर्म करने पड़ते हैं। लेकिन आश्चर्य तो यह है कि ये 10 रुपये कभी पूरे नहीं होते। क्योंकि पूरे 100 रुपये हों, इससे पहले 99 का चक्कर शुरू हो जाता है। बड़ा से बड़ा धनपति और सम्राट् भी पूरे 100 नहीं कर पाते हैं। 99 रुपये के ऊपर किसी के होते ही नहीं हैं। इसलिये 10 रुपये का दुःख नहीं, 90 रुपये का सुख उठाओ। सुखी जीवन का बस यही रहस्य है।

31. अपूर्व अवसर

अगर दुर्भाग्य से नरकगति में जन्म ले लिया तो वहाँ जिनवाणी सुनने का कोई अवसर नहीं है। अगर तिर्यंच गति में जन्म हो गया तो वहाँ यदा-कदा जिनवाणी श्रवण का मौका मिल सकता है, परन्तु जिनवाणी समझने का कोई अवसर नहीं है। प्रबल पुण्य से कभी देवगति प्राप्त हो गई तो वहाँ

जिनवाणी सुन सकते हैं, समझ सकते हैं, परन्तु चारित्रपालन का कोई अवसर नहीं है। केवल मनुष्य गति ही एक ऐसा मौका और सद्भाग्य है कि जहाँ जिनवाणी श्रवण करना, समझना और चारित्र का पालन संभव है।

32. नीतिपूर्ण अर्जन

गुरुनानक ने 'मलिक भगो' नामक धनाढ्य व्यक्ति द्वारा भेंट की हुई मिठाई को अपनी मुट्ठी में कसकर दबाया, जिससे उसमें से खून की बूंदें टपकने लगी और जब ग्वालो की भेंट दी हुई सूखी बाजरे की रोटी को दबाया तो दूध की धारा बहने लगी। उपस्थित जन समुदाय के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। गुरुनानक ने कहा, ''न्यायपूर्वक अपने श्रम से कमाय हुए भोजन में से दूध की धारा बहती है। जबकि अन्याय अत्याचार द्वारा प्राप्त मिठाई में से गरीबों का खून टपकता है।'' इससे मलिक भगो बहुत प्रभावित हुआ। उसने रिश्वत, झूठ, अन्याय से धन प्राप्त करना बिल्कुल बंदकर दिया।

33. नौकर ही दोषी

आप अपने घर में बैठे हैं। सामने फर्श पर काँच का गिलास रखा हुआ है। सामने से नौकर आया और पैर की ठोकर से गिलास फूट गया। आप यह देखकर नौकर पर उबल पड़े। गुस्से में कहा, ''अबे अन्धे। दिखता नहीं है क्या? आकाश में देखकर चलता है, मूर्ख कहीं का।'' यह एक पक्ष हुआ। दूसरा पक्ष देखिये। मान लीजिये आपके पाँव की ठोकर से वही गिलास फूट जाता, तब भी आसपास में काम कर रहे नौकर पर ही टूट पड़ेंगे, ''बेवकूफ! तुझे इतनी भी तमीज नहीं कि गिलास कहाँ रखना चाहिये।''

अरे! नौकर के पाँव से फूटा तो वह अन्धा हो गया और आपके पाँव से फूटा तो वह बेवकूफ हो गया। हर स्थिति में दोषी नौकर ही है। यह मनोवृत्ति कितनी न्यायसंगत है।

34. विज्ञान और धर्म

विज्ञान अन्तिम सत्य नहीं है। अंतिम सत्य है धर्म। जैन धर्म पूरी तरह से वैज्ञानिक धर्म है। जैन धर्म के विज्ञानसम्मत तथ्यों से प्रभावित होकर ही जॉर्ज बर्नार्ड शॉ ने अंतिम समय में अपनी भावना को प्रकट करते हुए कहा था, "If I were to select a religion it would be an estern one Jainism." अर्थात् यदि मुझे कोई धर्म चुनना पड़े तो वह जैन धर्म होगा।

पाश्चात्य देशों में वैज्ञानिक पैदा होते हैं। भारत में तीर्थङ्कर, अवतार, ऋषिमुनि जन्म लेते हैं। ऋषिमुनि आत्मा के तल पर जीने वाले होते हैं, इसलिये वे विश्व समुदाय को अध्यात्म का प्रसाद बाँटते हैं। वैज्ञानिक शरीर के तल पर जीते हैं, इसलिए वे भौतिक संसाधनों का आविष्कार करते हैं। पाश्चात्य संस्कृति की अवधारणा है कि खाओ, पियो और मौज करो। जबकि भारतीय संस्कृति, तप, त्याग व साधना पर अवलम्बित है। भारतीय संस्कृति की मूल चेतना अहिंसा, त्याग, प्रेम, परोपकार व मानवीय कल्याण की भावना में है।

35. अनित्य संसार

शरीर मृत्यु से जुड़ा हुआ है, जीवन भी चंचल है। यह शरीर हड्डी, माँस, मज्जा, रक्त आदि का समूह है। ऊपर से चमड़े से ढका हुआ है। यह सदा वीभत्स है। भला ऐसे शरीर में कभी सुंदरता हो सकती है? सर्व अपवित्रताओं का घर, कृतघ्न और नष्ट हो जाने वाले इस शरीर के लिए मनुष्य कितना पाप करता है। यह देह रोगों का खजाना है, बुढ़ापे के वश में होने वाला है। इसका अंत करने वाला काल इसके भीतर छिपा है। तटवर्ती वृक्ष की तरह नित्य लहरों का आघात सहता है। फिर भी अगणित पुण्यों के कारण प्राप्त इस देह को ही आत्मा मानने वाला व्यक्ति बल, रूप, यौवन में

मत्त होकर इसमें स्थित दोषों को नहीं देखता है। जो शांत वैराग्य रस का आस्वादन करने से अपूर्व तृप्ति होती है, वह रसना इन्द्रिय से षट्रस का स्वाद लेने से भी नहीं हो सकती।

मार्ग में जैसे राहगीरों का साथ मिल जाता है, उसी तरह चक्रवत परिवर्तनशील इस अनित्य संसार में भाई, माता, पिता, परिजन, सम्बन्धी, मित्रजन आदि का साथ है। शरीर पानी के बुलबुले की तरह निःसार है तथा यह जीवन विद्युत के समान चंचल है। स्त्री, पुत्र, स्वजन और धन में विशेष आसक्ति नहीं करनी चाहिए, क्योंकि इनसे वियोग अवश्य होता है। जन्म से साथ निभाने वाला यह शरीर ही जब मरण के समय साक्षात् पृथक् दिखाई देता है, तब स्पष्ट रूप से भिन्न दिखने वाला घर आदि क्या अपने हो सकते हैं।

36. एरण्ड और बरगद

एरण्ड का पेड़ बहुत जल्दी हरा-भरा हो जाता है। वर्षाऋतु के 2-3 महीने में तो वह पश्चों व फूलों से लद जाता है और ऐसा लगता है, मानो पाँच साल पुराना वृक्ष हो। उधर बड़ के वृक्ष को देखिये, वह धीरे धीरे बढ़ता है। दो-चार वर्ष तक तो उसकी टहनियों का पूरा-पूरा विकास विस्तार ही नहीं हो पाता। पर एरण्ड की उम्र कितनी और बड़ की उम्र कितनी। एरण्ड एक वर्ष भर भी मुश्किल से जिन्दा रहता है और बड़ सैकड़ों-हजारों वर्षों तक हरा-भरा रहकर संसार को छाया देता रहता है। तात्पर्य यह है कि अनीति और अन्याय से आजीविका करने वालों की सम्पत्ति एरण्ड की तरह क्षणस्थायी होती है और न्याय-नीति से अर्थोपार्जन करने वालों की सम्पत्ति एवं समृद्धि बरगद की भाँति सदा बढ़ती रहती है। उसकी सुख-संपदा चिरंजीवी होती है।

37. साधु है पूजनीय

एक चोर भागा। पकड़ने को सिपाही पीछे-पीछे भागे। चोर ने घबराकर कपड़े उतार दिये। कपड़ों में आग लगा दी और जले हुए कपड़ों की राख से शरीर भस्मीभूत कर लिया। भागने वाले लोगों ने उसे साधु समझकर नमस्कार किया। उस चोर ने सोचा कि असल में मैं चोर हूँ, ढोंगी साधु हूँ, फिर भी मुझे लोग नमस्कार करते हैं। अगर मैं सही में साधु बन गया तो मेरा कल्याण हो जायेगा। यह सोचकर वह सचमुच साधु बन गया।

38. आसक्ति

जब हम आत्म निरीक्षण कर अनुभूतियों के बल पर देखते हैं तो पाते हैं कि प्रत्येक दुष्कर्म का कारण अपने चित्त की मलिनता है, कोई न कोई मनोविकार है। हम यह भी देखते हैं कि प्रत्येक विकार का कारण अपने ही अहम् के प्रति उत्पन्न हुई गहन आसक्ति है। जब-जब आसक्ति के अंधेपन में इस मैं को अत्यधिक महत्त्व देकर व्यक्ति इससे चिपक जाता है, तब-तब संकुचित दायरे में आबद्ध होकर वह मन मलिन कर कोई न कोई ऐसा कर्म कर लेता है, जो परिणामतः अकुशल होता है।

39. वर्तमान

जिसने अपना वर्तमान सुधार लिया, उसे भविष्य की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। उसका भविष्य स्वतः सुधर जाता है। जिसने लोक सुधार लिया, उसे परलोक की चिन्ता नहीं। उसका परलोक स्वतः सुधर जाता है। जो अपना वर्तमान नहीं सुधार सका, अपना इहलोक नहीं सुधार सका और केवल भविष्य की ओर आशा लगाय, परलोक की ओर टकटकी लगाय बैठा है, वह अपने आपको धोखा देता है।

40. रोमांचक कहानी

शरीर को अपना घर माना और उसमें रहा, किन्तु वह अपना नहीं था। आँसू बहाते विवशता से एक दिन उसे खाली करना पड़ा। यदि वह अपना होता तो उसे खाली नहीं करना पड़ता। अनन्त जन्मों में हर बार ऐसा हुआ। फिर भी आँखें नहीं खुली। कितनी रोमांचक है जीवन की कहानी। खैर, अब भी आँखें खुल जाय तो अतीत का घटना-चक्र प्रेरक बन जायेगा।

41. स्वयं का दायित्व

एक बात ठीक तरह से समझ लेनी चाहिए कि अपने दुःखों के लिए हम स्वयं जिम्मेदार हैं। हम स्वयं ही अपने पागलपन में, नादानी में, अज्ञान अवस्था में, अपने भीतर मैल पर मैल इकट्ठा करते रहते हैं। परिणामतः व्याकुल होते रहते हैं। इस मैल को हमने चढ़ाया है, हमें ही निकालना होगा। आगे बढ़कर देखेंगे तो यह स्पष्ट होगा कि मेरे सुख या दुःख का शत प्रतिशत मैं ही जिम्मेवार हूँ।

42. क्रोध व क्षमा

क्रोध आने पर हमें होश रह नहीं पाता, होश आने पर पश्चात्ताप करने से लाभ नहीं होता। चोर आए तब सो जाये, परन्तु उसके द्वारा घर का माल चुरा ले जाने के बाद जल्दी-जल्दी ताले लगायें तो इससे क्या लाभ? निकल भागने के बाद उस साँप की लकीर पीटते रहे तो क्या लाभ?

क्रोध का तात्कालिक परिणाम खराब है। क्षमा का दीर्घकालिक परिणाम सुन्दर है। पत्थर फेंकना क्रोध के बराबर है। पानी डालना क्षमा जैसा है। क्षमा पानी की तरह स्थायी परिणाम वाला है। हम पूजा राम की करते हैं और दोस्ती रावण से करते हैं, यह विडम्बना खत्म होनी चाहिये।

43. दुर्जन

दुस्तर समुद्र को पार करने का साधन जहाज है। अन्धकार निवारण का साधन दीप है। हवा न रहने पर उसका साधन पंखा है। मदान्ध हाथी को शांत करने का साधन अंकुश है। इस पृथ्वी पर ऐसी कोई वस्तु नहीं है, जिसका विधाता के द्वारा उपाय न सोचा गया हो। लेकिन मैं मानता हूँ कि दुर्जन की चित्तवृत्ति के हरण के उपाय में विधाता भी भाग्नोद्यम हो गये।

44. ईश-स्मरण

संसार के समस्त कार्यों को करते वक्त भी मन को ईश्वर के साथ लगा कर रखना चाहिये। ईश्वर भक्ति को छोड़कर संसार चलाना चाहो तो दुःख में ही रहना पड़ेगा। आपदा, शोक, ताप यही हिस्से पर आयेगा। ज्यों ज्यों संसार का चिंतन करोगे त्यों-त्यों उसमें आसक्ति बढ़ती जायेगी। जीने के साधनों की प्राप्ति करते करते व्यक्ति कैसे जीना है, यह भूल जाता है।

45. छद्म अपनापन

शरीर परिवार आदि अपने नहीं थे, अपने नहीं हुए और अपने नहीं रहेंगे। इसलिए वे अपने नहीं हैं। जो एक दिन अपना नहीं था और एक दिन अपना नहीं रहेगा उसे अपना मानने से क्षणिक सुख मिलता है और अक्षणिक शांति से वंचित रहना पड़ता है। दुनिया में अपना कोई नहीं, सब माना हुआ अपनापन है। माना हुआ अपनापन टूटने पर कभी सह्य और कभी असह्य चीखें निकलती है। छद्म अपनापन छोड़ने पर अशांति की जड़ें उखड़ जाती हैं।

46. स्थायी सफलता

ईमानदारी, इंसाफ और इज्जत, ये तीनों चीजें ऐसी हैं कि जहाँ कहीं भी होगी, एक साथ होंगी। यों कहें कि इनका चोली-दामन का साथ है। कमीनेपन और बेइंसाफी के सम्मेलन से झूठ पैदा होता है। झूठ बोलने वाला सदा ही बच निकलता रहे, यह संभव नहीं। एक न एक दिन उसकी कलई

खुल जाती है और फिर उसे जलील होना पड़ता है। ईमानदारी, इंसाफ और इज्जत के बिना कभी किसी को स्थायी सफलता नहीं मिल सकती।

47. उपकार

माता, पिता व गुरु उपकारी हैं। उनके प्रति मन में गाँठ नहीं हो, द्वेष नहीं हो। शिष्य अपने गुरु की निंदा व अविनय करे तो जिंदगी भर की उसकी साधना समाप्त हो जाती है। वफादारी का गुण सदैव याद रखना चाहिये। एक पान का बीड़ा भी जिसका खाया है, उसे भूलना भी कृतघ्नता है। जो उपकारी के उपकार को भूल जाता है, भविष्य में उसके प्रति कोई उपकार नहीं करेगा।

48. हृदयहीनता

किसी की कमजोरी या अज्ञान का लाभ उठाना भी झूठ का सहारा लेना है। लेकिन इस काम को झूठे लोग यह कहकर न्यायोचित ठहराने का प्रयास करते हैं कि यह अन्याय नहीं, हमारी होशियारी है और उन अज्ञानियों का दुर्भाग्य है, इसमें हम क्या कर सकते हैं, कुदरत का यही दस्तूर रहा है। ऐसा कहकर ये लोग कुदरत और भगवान को भी अपने लाभ के लिए इस्तेमाल करते हैं। क्या यह इन्सानियत है कि हम अनजान, भोले और मासूम लोगों के अज्ञान का शोषण करें। क्या किसी की शारीरिक या मानसिक कमजोरी से फायदा उठाना कोई भी सहृदय व्यक्ति कभी चाह सकता है। प्रकट है कि जो ऐसा करते हैं वे हृदयहीन हैं, पशु हैं, बर्बर हैं।

49. सफल व्यापारी

सफल व्यापारी का उसूल यह होता है कि वह स्वयं को ग्राहक की जगह रखकर देखे। ग्राहक को संतुष्ट रखने पर ही व्यापार का कारोबार टिका हुआ है। जिसका ग्राहक ही असंतुष्ट है, उसका व्यापार आज या कल का ही मेहमान होता है। क्योंकि एक संतुष्ट ग्राहक सौ नये ग्राहक और लाता है तथा

एक असंतुष्ट ग्राहक सौ लगे बंधे ग्राहक तुड़वा देता है। ग्राहक को संतोष आप केवल अपनी ईमानदारी द्वारा ही दे सकते हैं, न कि झूठ बोलकर या उसे ठग कर।

50. बेईमानी

दूसरों का हक मारना भी बेईमानी है। काम करा कर पूरा मेहनताना न देना अन्याय है। और इस अन्याय के कारण अगर आपका नौकर या कर्मचारी कदाचित चोरी या गबन करता है तो इसके लिए उससे अधिक नियोक्ता खुद जिम्मेदार है। इस घटना से कोई भी मालिक नसीहत ले सकता है। अपने कर्मचारियों को जीने योग्य वेतन न देना उन्हें अपराधी बनने के लिए उकसाना है।

51. रोना नहीं रोएँ

जीवन का एक सुनहरा उसूल याद रखिये कि आपको अपनी कठिनाइयों को स्वयं ही सहज बनाना है। किसी के सामने अपनी कोई मुश्किल लेकर नहीं जाना, क्योंकि हर किसी के पास अपनी अपनी मुश्किलें ही इतनी अधिक हैं कि उन्हें आपकी दिक्कतों को जानने की फुरसत और दिलचस्पी नहीं। आप हँसेगे तो सारी दुनिया आपके साथ हँसेगी, लेकिन आप रोयेंगे तो आपको अकेले ही रोना पड़ेगा। अगर आपको रूलाई भी आ रही हो तो भीतर ही भीतर पी जाईयेगा और ऊपर से ऐसा प्रकट कीजियेगा कि आप हँस रहे हैं।

52. सुख-त्याग जरूरी

सुख-सुविधायें भी बनी रहें और लक्ष्य भी पूरा हो जाय यह संभव नहीं होता। लक्ष्य बड़ा बेरहम होता है। हर सुख की समिधा चाहता है, हर सुख की कुर्बानी माँगता है। अगर आपमें सुख-त्याग की क्षमता है तो आप अपने लक्ष्य को सफलतापूर्वक पा सकेंगे। यदि कठिनाइयों से डरने के बजाय

सीना तानकर इनका सामना शुरू कर दें तो बड़ी से बड़ी कठिनाइयों के पहाड़ मोम की तरह पिघल जायें।

53. लक्ष्य

मनुष्य का जीवन उसके लक्ष्य से प्रभावित होता है। पहले अपना लक्ष्य स्थिर कीजिये, भले आप आसमान के तारे तोड़ना चाहते हो। जवाहरलाल नेहरू कहा करते थे कि तारों तक भले हम न पहुँच पायें, लेकिन उनकी तरफ निगाह तो रहनी चाहिये। जिसमें ऊपर उठने की तमन्ना ही नहीं है, उसकी किस्मत जमीन पर जिल्लत में पड़े रहने की है। जिस व्यक्ति के पास जीवन का कोई कार्यक्रम नहीं है, उसके पल्ले क्या पड़ेगा? सिवाय गड़बड़ और उलझन के?

54. प्रार्थना और परिश्रम

मैंने सुना है कि अपने इस खूबसूरत बाग के लिए आपने ईश्वर से प्रार्थना की थी। ''क्या यह सच बात है?''

''बिल्कुल सच है।''' शान के साथ उसने जवाब दिया ।

लेकिन खूबसूरत बाग के लिए मैं कभी खाली हाथ प्रार्थना नहीं करता, तभी करता हूँ जब मेरे हाथ में फावड़ा होता है। मैं कहता हूँ, ''हे मेरे प्रभो! धूप और बारिश देना तेरा काम है, खुदाई मैं खुद करूँगा।''

55. वक्त की बात

अंग्रेजी साहित्यकार डॉ. सैमुअल जानसन से किसी ने कहा कि एक दिन ऐसा आयेगा, जब आदमी बीस मील प्रतिघंटे की रफ्तार से सफर करेगा। यह सुनकर वह मनीषी बोले, ''नामुमकिन! बीस मील प्रतिघंटे का सफर! तब तो आदमी का साँस ही फूल जायेगा।'' आज आदमी हजार मील प्रतिघंटे चलता है और मजे से साँस लेता है।

56. दिन का उपयोग

अपने दिन का सदुपयोग करने की युक्ति अपनाइये। एक दिन को लीजिये। उसे कई हिस्सों में बाँट दीजिये। हर हिस्से को उसके लायक काम सुपुर्द कीजिये–खाली मत छोड़िये। कोई घंटा, दस मिनट, एक मिनट भी बेकार मत गँवाइये। हर पल का उपयोग कीजिये। हर काम बारी–बारी से कीजिये। सलीके के साथ, पूरी पाबंदी के साथ। दिन खत्म होने पर आयेगा और आपको ध्यान ही नहीं रहेगा कि वह कब शुरू हुआ था।

57. सुगम राहें

शरीर की परवाह न करने वाले, सोच समझ कर कार्य करने वाले दक्ष व्यवसायी के लिए कोई कार्य दुष्कर नहीं है। नीति में कहा गया है कि शक्तिशाली के लिए कौनसा उत्तरदायित्व बड़ा है? उद्यमी के लिए क्या दूर है? विद्वान के लिए क्या देश और क्या परदेश तथा विदेश है? और प्रियवादी के लिए कौन शत्रु है? सूझबूझ, ज्ञानप और सदगुणों से सभी रास्ते आसान हो जाते हैं।

58. लक्ष्मी

कवि कबीर ने एक भक्त को मंत्र दिया, जिससे उसको स्वप्न में लक्ष्मी के दर्शन हो गये। लक्ष्मी के मस्तक पर धूल थी और पाँव काले थे। भक्त घबराया, परन्तु इसका स्पष्टीकरण उसने कबीर से पूछा। कबीर ने कहा, ''लक्ष्मी त्यागी–संन्यासियों के चरण चूमती है, जिससे उनके चरणों की धूल लक्ष्मी के मस्तक को लगती है। धनी लोग लक्ष्मी के चरणों पर अपना मस्तक रगड़ते हैं। धनियों के मस्तकों की रगड़ से लक्ष्मी के पाँव काले हो गये हैं।''

59. सहिष्णुता

ग्रीस के प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात कुछ लोगों के बीच अपनी बात समझा रहे थे। उनके बोधप्रद विचार कुछ लोगों को और उनके विरोधियों को अच्छे नहीं लगते थे। इससे वो लोग बीच बाजार में उनका अपमान कर

देते थे। एक बार किसी विषय को लेकर वे कुछ लोगों को ज्ञान की बातें बता रहे थे। इतने में उनका एक विरोधी उन्हें लात मारकर चला गया। उनके मित्रों को बहुत बुरा लगा। परन्तु सुकरात पर इसका कोई असर नहीं पड़ा। वे पूर्ववत् अपनी चर्चा चलाते रहे। घर आने पर उनके मित्रों ने कहा–''यह ठीक नहीं, ऐसे लोगों को तो सबक सिखाना चाहिये।'' सुकरात बोले–''समझो, मुझे एक गधे ने लात मार दी, क्या मैं भी उसके साथ ऐसा ही व्यवहार करूँ?''

60. दयालु रहीम

रहीम पालकी के अंदर थे। गरीबी से परेशान एक कुम्हार ने रहीम के ऊपर लोहे की पंसारी फैंकी। रहीम बाल–बाल बचे। कुम्हार को पकड़कर रहीम के घर लाया गया। रहीम ने लोहे की पंसारी के बराबर उसे सोना तोलकर दे दिया। लोगों ने कहा, उसे तो फाँसी देनी चाहिए थी। दयालु रहीम बोले, ''तुमने इसका मन नहीं समझा। उसने मुझे पारस समझकर लोहा फेंका, परन्तु तुमने उसे बीच में रोककर बहुत बड़ी गलती की।''

61. लड़ाई

चीन में एक पुरानी कहावत है कि बुरे आदमी से कभी लड़ाई मत करना। क्योंकि बुरे आदमी से तुम लड़ाई करोगे तो धीरे–धीरे तुम भी बुरे बनते जाओगे। बुरे आदमी के साथ उसी की भाषा में बोलना पड़ेगा, उसी के ढंग से लड़ना पड़ेगा, वही व्यवहार करना पड़ेगा, जो वह समझ सकता है। धीरे धीरे तुम पाओगे कि तुम भी बुरे आदमी बन गए। अगर लड़ाई लेनी हो तो अच्छे आदमी से लेना। अगर लड़ना ही हो तो सन्तों से लड़ना, जिज्ञासा और प्रेम से लड़ना। ऐसा करोगे तो तुम सन्तों जैसे हो जाओगे। हिटलर हार गया लेकिन सारी दुनिया को बदल गया। क्योंकि जो लोग उससे लड़े वे सब धीरे–धीरे हिटलर जैसे हो गये।

62. विकृति की शक्ति

दूध की भरी प्याली में जहर की एक बूंद काफी है, उसे नष्ट करने को। यद्यपि जहर की भरी प्याली में दूध की एक बूंद उसे शुद्ध नहीं करेगी। विकृत बड़ा समर्थ है। अशुद्ध जल्दी असर करता है। शुद्ध बहुत कोमल होता है। फूल को पत्थर मार देने से फूल बिखर जाता है और हजार फूल पत्थर को मारो तो भी पत्थर के कुछ नहीं होता।

63. दोराहे पर जीवन

प्रभु व पशु के बीच का हमारा मानव जीवन है। कहीं यहाँ से नीचे चले गये तो समय व श्रम दोनों की बरबादी ही होगी। मुसाफिर यदि पदयात्रा में कभी गलत राह पर चला जाता है, तो फिर सही राह पर आने के लिए कितना समय व श्रम करना पड़ता है। अगर नाव जहाँ की तहाँ रही तो फिर मनुष्य जन्म पाने का अर्थ क्या?

64. बाह्य रूप

दूसरों की नजरों में हम कितने ही प्रशंसनीय हों, उससे हमारा कल्याण नहीं होगा। जब तक खुद की नजरों में अच्छे नहीं हों तब तक कोई फायदा नहीं। हमारी ऊपरी वेशभूषा व रूप-रंग को देखकर कोई कितनी भी तारीफ करे, अगर अंदर कपड़ों के नीचे पेट पर सफेद कोढ़ का दाग हो तो क्या वह प्रशंसा सुनकर हमें प्रसन्नता होगी।

65. प्रश्न

राजा ने पुत्र को राज्य का कारोबार देकर संन्यास लेना चाहा। राजपुत्र ने अपने पिता से पूछा कि यह राज्य सुखदाई है या दुखदायी। अगर सुखदाई है तो आप क्यों छोड़ रहे हैं? और दु:खदाई है तो फिर आप मुझे क्यों दे रहे हैं?

एक पुत्र ने साधु बनने की इच्छा जाहिर की, तब पिता ने कहा बेटा,

''यह तो खाने-पीने व भोग भोगने की उम्र है, इस समय दीक्षा क्यों ले रहे हो।'' तब बेटे ने कहा, ''अगर मेरी उम्र ऐसी है, तो फिर आपकी उम्र ठीक है। आप क्यों नहीं दीक्षा ग्रहण कर लेते?''

66. सुख व पोशाक

एक राजा ने एक संत से सुखी होने का उपाय पूछा। संत ने कहा, ''तुम किसी सुखी व्यक्ति की पोशाक लेकर आओ।'' राजा बहुत घूमा, लेकिन उसे ऐसा कोई सुखी व्यक्ति नहीं मिला। आखिर एक दिगम्बर संत मिले, जिन्होंने कहा कि वे पूर्ण सुखी हैं। राजा पहले संत के पास पहुँचा और सारा वृत्तान्त बताया और कहा कि एक संत सुखी तो मिले, परन्तु उनके पास पोशाक नहीं है। संत ने कहा, ''अगर तुम सुखी होना चाहते हो तो अपनी पोशाक उतार दो।''

67. योग का उपयोग

योग का उपयोग करना सुज्ञता का सूचक है। क्योंकि न योग हमारे हाथ में है, न वियोग को रोक पाना हमारे लिए संभव है। मात्र उपयोग करना हमारे हाथ की बात है। हमें मनुष्य जीवन का योग मिला है, उस योग का उपयोग व्यक्ति सांसारिक सुख सामग्री के संग्रह में करता है, लेकिन अभिलाषा कभी पूर्ण नहीं होती, क्योंकि आत्मज्ञान के अभाव में भौतिक पदार्थों के प्रति रुचि बनी रहती है। हम आत्मा व शरीर के अनित्य संबंध को जानें, समझें व चिंतन करें। समझदार व्यक्ति वही है जो संयोग का वियोग होने से पूर्व उसका सदुपयोग करे।

68. धन का उपयोग

कुछ व्यक्ति पैसे का दुरुपयोग करते हैं; शराब, सिगरेट, पान, जुआ आदि व्यसनों में खर्च करके। कुछ व्यक्ति अपने पैसे से परोपकार करते हैं; जैसे, किसी की शिक्षा, चिकित्सा आदि में खर्च करके। कुछ व्यक्ति पैसे को

व्यर्थ बना देते हैं; जैसे बैंक में पैसा जमा करके। पैसे को जोड़ने की भावना से न स्वयं पर खर्च करते हैं, न दान आदि दे पाते हैं। पैसे की अति आसक्ति इसे व्यर्थ बना देती है।

69. संत कौन ?

संत आध्यात्मिक आकाश में इंसानियत का इन्द्र धनुष हैं। संत सौहार्द्र के सितार पर सद्भाव का संगीत है। संत विकृति के बाजार में संस्कृति का शंखनाद है। संत प्यार की पेढ़ी पर परमात्मा की प्रार्थना है। संत शत्रुता के शूल नहीं चुभाता है। संत कलह के काँटे नहीं उगाता है। संत वासनाओं के बताशे नहीं बाँटता है। संत षड़यंत्र के यंत्र नहीं बेचता है। संत समाधिमरण का बीज देता है। संत आचरण का आशीष देता है। संत जागरण का ताबीज देता है। संत कभी नष्ट न हो, वह चीज देता है। संत वह मानसरोवर है, जिसमें 'कंस'' जैसा अधम मनुष्य भी डुबकी लगाये तो हंस और परमहंस बनकर निकले।

70. स्वयं पर विश्वास

जिंदगी एक यात्रा है, जिसमें पौ जन्म है, प्रभात बचपन, दोपहर जवानी है, संध्या बुढ़ापा और रात मृत्यु है। रात, जीवन की कहानी का उपसंहार है, विराम है, पटाक्षेप है। तुम्हारी जिंदगी तो अनंत की संभावना है। तुममें अनंत शक्तियाँ छिपी हैं, असंख्य दिव्यतायें तुममें मौजूद हैं। अपनी इन संभावनाओं, शक्तियों और दिव्यताओं को पहचानना और उन्हें साकार करना ही जिंदगी का असली मकसद है। लेकिन दुर्भाग्य है कि इस मुल्क का आदमी साढ़े तेतीस करोड़ देवी-देवताओं के अस्तित्व पर तो विश्वास कर लेता है, लेकिन अपने में जो एक जीवित परमात्मा है उस पर विश्वास नहीं कर पाता है। चौबीस तीर्थङ्करों एवं अनंतानंत सिद्ध परमात्माओं पर श्रद्धा कर लेता है, लेकिन एक अपने आप पर ही श्रद्धा नहीं कर पाता है। इसी कारण से वह पुजारी तो बना रहता है लेकिन पूज्य नहीं बन पाता है।

71. जन्मदिन

आज तुम्हारा जन्मदिन है तो ज्यादा खुश मन होना। जन्मदिन मनाना। जरूर मनाना, लेकिन इस दिन यह भी याद रखना कि तुम्हारी जिंदगी का एक साल कम हो गया है। मौत एक कदम तुम्हारे और करीब आ गई है। जन्मदिन पर हम गुजरे हुए वर्षों के बारे में न सोचें, बल्कि आने वाले वर्षों के बारे में सोचें कि जीवन में ऐसा क्या रह गया है जिसे करना था और हम अभी तक नहीं कर पाये।

72. संयोग-वियोग

संसार में चिपको मत। चिपकोगे तो रोना पड़ेगा। संसार में रहो। संसार को मन में मत रखो। मिलना, बिछुड़ना यह संसार का पुराना नियम है। जिसका मिलना तुम्हें सुख देगा, उसका बिछुड़ना, तुम्हें बहुत रुलायेगा। संसार का संयोग वियोग के लिए होता है। संयोग में जितना सुख है, उससे सौ गुना दुःख वियोग में होता है। एक दिन ऐसा जरूर आयेगा, जिस दिन तुम उसे छोड़ दोगे या वह तुम्हें छोड़ देगा।

73. अतृप्ति

सम्राट् नेपोलियन ने सेंट हेलीना के टापू पर तड़प-तड़प प्राण छोड़े। तानाशाह हिटलर आत्महत्या करके मृत्यु को प्राप्त हुआ। विचारक टॉलस्टॉय अज्ञात स्टेशन पर भयंकर वेदना भोगते हुए मरण की शरण में गये। सम्राट् सिकंदर माँ के दर्शन की अतृप्त इच्छा से मरे। सभी वैद्य हकीमों को यहाँ बुलाना, यह कहते हुए मरे। विख्यात वैज्ञानिक आइंस्टीन इस इच्छा के साथ मरे कि यदि पुनर्जन्म जैसी कोई चीज हो तो आने वाले जन्म में वे प्लम्बर (नलसाज/कारीगर) बनना पसन्द करेंगे; वैज्ञानिक बनना तो हर्गिज नहीं!

74. हताशा

केनेडी की हत्या हुई। इंदिरा गाँधी, संजय गाँधी और राजीव गाँधी अस्वाभाविक मृत्यु से मरे। जनरल जिया-उल-हक, जनाब भुट्टो, अयूबखान तड़प-तड़प कर मरे। अनेक नोबल विजेताओं, ऑलम्पिक चेम्पियनों आदि की विदाई आँसू, विलाप और वेदना से भरी हुई रही। जीवन के अंतिम समय में हताशा ने उन्हें घेर लिया था। अकेलेपन ने उन्हें आकुल-व्याकुल बना दिया। प्राप्त सफलताओं के पीछे छुपी निष्फलताओं के दर्शन ने उन्हें कल्पनातीत हद तक व्याकुल बना दिया। तुम स्नातक हो ना? डिग्रीधारी हो ना? बुद्धिमान हो ना? तो इन वास्तविकताओं पर गंभीरता से विचार करके देखना। तुम्हारा हृदय क्रंदन कर उठेगा, तुम्हारी आँखें रो पड़ेंगी। तुम चिल्ला उठोगे कि 'इस दुःखद परिणाम वाले रास्ते पर कदम?'' हर्गिज नहीं।

75. विश्व-आकाश

यह संसार तो बिल्कुल आकाश जैसा है। जैसे सुख के सूर्य को दुःख के बादल कब ढक दें, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती, वैसे ही जीवन के आकाश को संक्लेशों की काली रात आकर मन को कब अंधकारमय बना दे, इसका भी कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता। दुश्मन रूपी गिद्ध शांति के कबूतर को कब अपनी चपेट में ले लें यह कोई सोच नहीं सकता। कष्टों की बिजली गिरकर प्रसन्नता के बगीचे को कब जला डाले यह समझा नहीं जा सकता।

76. हम परमात्मा बनें

वर्तमान जीवन कोई अंतिम जीवन नहीं है और यह कोई प्रथम जीवन भी नहीं है। भूतकाल में अनंत जीवन व्यतीत करके हम यहाँ आये हैं और अब भी विराट अनंतकाल हमारे सामने खड़ा है। केवल इहलौकिक दृष्टि हमें नहीं रखनी है, केवल आँखों के सामने दिखे, यही हमें नहीं मानना

है। मात्र सामग्रियों के अंबार से ही हमें संतुष्ट नहीं होना है। इंसानियत हमें दिखानी है, सहिष्णुता हमें विकसित करती है। हमें सद्गति में जाना है, अतीन्द्रिय तत्त्वों को हमें मानना है, श्रद्धा को आत्मसात करना है, संतोष को जीवन की पूँजी बनाना है, हमें परमात्मा बनना है।

एक लड़के ने परमात्मा से कहा, ''प्रभु! मैं आपसे शादी करना चाहता हूँ। मैं वर्षों से आपसे प्यार करता रहा हूँ।'' परमात्मा ने उससे शादी करने से इनकार कर दिया। भक्त के अति आग्रह करने पर परमात्मा ने कहा, ''तुम मेरे सिवाय किसी से प्यार नहीं करोगे। पैसा, पद, प्रतिष्ठा; ये सब तुम्हें छोड़ने पड़ेंगे। तभी मैं तुमसे शादी कर सकता हूँ।''

77. स्वयं की चिन्ता

तू अपनी चिन्ता कर। दुनिया की चिंता करने के लिए तो दुनिया है, पर तुझे छोड़कर कोई दूसरा तेरी चिन्ता करने वाला नहीं है। आदमी है कि दूसरे की चिन्ता में दुबला हो रहा है। मेरे बच्चों का क्या होगा? क्यों भाई। तेरे बच्चों के बच्चे क्या विकलांग पैदा होंगे? तू इस बात की चिन्ता मत कर कि मेरे बाद व्यापार को कौन संभालेगा? व्यापार तो बीवी बच्चे कोई भी सँभाल लेगा। तू इस बात की चिन्ता कर कि दुर्गति में तुझे कौन संभालेगा?

78. हम सब यात्री

भगवान महावीर स्वामी से गौतम स्वामी ने पूछा, हम सब कौन हैं और संसार से हमारा क्या सम्बन्ध है तथा यहाँ याद रखने जैसा क्या है? भगवान महावीर ने कहा–गौतम! हम सब यात्री हैं। हमारा सम्बन्ध नदी–नाव संयोग जैसा है। देर–सवेर तो विदा होना ही है। मिलन के क्षण में भी विदाई न भूलो। किसी से हाथ मिलाओ तो यह मत भूलो कि कल हमें अलविदा कहना है। फूल खिले तो खिले फूल में मुरझाये फूल को देख लेना। जीवन मिले तो मिले जीवन में मिली मौत को मत भूल जाना।

79. परिवर्तन

बचपन में बच्चों जैसे खेलो, कूदो और बेफिक्री से जिओ। मगर जब बच्चों के बाप बन जाओ तो बच्चों के सब खेल छोड़ दो और जब बूढ़े हो जाओ तो जवानी के खेल और हँसी-मजाक जवानों के लिए छोड़ दो। जवानी की रंगरेलियाँ बूढ़े आदमी को शोभा नहीं देती। इस सत्य को कभी मत भूलो कि नदी फिर अपने निकास की तरफ नहीं लौटती। बचपन ही अपना न रहा तो जवानी कितने दिन टिकने वाली है। आखिर बुढ़ापा और मृत्यु तो आने ही वाली है।

80. कला

जीना एक कला है। हँसते हुए जीना इससे भी बड़ी कला है। हँसाते हुए जीना और भी बड़ी कला है। पर हँसते हुए मरना सबसे बड़ी कला है। जब तुम पैदा हुए तो दुनिया हँस रही थी और तुम रो रहे थे। अब कुछ ऐसा करो कि जब तुम मरो तब दुनिया रोए और तुम हँसो। रोते हुए पैदा होना, दुर्भाग्य नहीं है, वरन् रोते-रोते जीना और रोते-रोते मर जाना यह दुर्भाग्य है। हँसना खुशियों का खजाना है। संसार में रुदन तो सबके पास है। अगर तुम दूसरों को कुछ देना चाहते हो तो बस उसका चेहरा मुस्काराहट से भर दो। इससे बेहतर और कोई तोहफा नहीं होगा।

81. चंचल सत्ता

समय का क्या जाता है, प्रभात होगा फिर रात होगी। चाँद और सूर्य आते-जाते रहेंगे, लेकिन मनुष्य का जीवन निरन्तर घटता जा रहा है। इसे देखते हुए भी मनुष्य अपना हित नहीं समझ रहा है। जिसने इस चंचल सत्ता को पाकर मित्रों का उपकार और बंधुवर्ग का सत्कार नहीं किया तो उसने क्या किया? हमें बाहर के दृश्य लुभावने लगते हैं, परन्तु इन भौतिक सुखों के पीछे दुःख भागता हुआ हमारे पास आ रहा है। मछली को आटा दिखता है परन्तु आटे के पीछे का काँटा नहीं दिखता जो जानलेवा होता है।

82. समयोचित उपयोग

हे मनुष्य! दरिद्रता से पीड़ित इस भूखे-प्यासे बालक को तू संतुष्ट कर। अन्यथा समय बीतने पर जब मृत्यु का आगमन होगा, तब तू कहाँ रहेगा? कहाँ तेरा धन रहेगा? और कहाँ यह अनाथ बालक रहेगा?

हे मेघ! दावानल से घबराये हुए लंबे समय से प्यासे इस चातक पक्षी के बच्चे को तू जलदान कर। अन्यथा क्षणभर हवा चलने पर तू कहाँ रहेगा? कहाँ तेरा पानी रहेगा? और कहाँ यह चातक? समय पर अपने जल का उपयोग कर।

83. धन का माप

जो समय आप धंधे में देते हो, उतना समय प्रभु के लिए दो। समय तो जितना है, उतना ही है; अधिक होने वाला नहीं है। शर्ट का माप है, पाजामे का माप है, बूट का माप है, मोजे का माप है; सबका माप है, परन्तु पैसे का माप नहीं है। सभी नोटों का बिस्तर बनाकर सो जाओ, तो भी शांति की नींद नहीं आयेगी। तब भी यही फिक्र रहेगी कि कहीं चूहा नहीं काट ले, चोर न आ जाय, आयकर वाले न आ जाय। जब नींद ही अच्छी नहीं आती तो मौत कैसे अच्छी आयेगी। बंगले वाले को देखकर ईर्ष्या होती है। साधु को देखकर ईर्ष्या क्यों नहीं होती? सुख बंगले वाले को ज्यादा है या साधु को?

84. गर्भपात

अभी अधर्म इतना बढ़ गया है। अत्याचार, दुराचार, व्यभिचार, भ्रष्टाचार, माँसाहार इतना व्यापक बन गया है, फिर भी भगवान नहीं आते। कहते हैं, जब-जब भी धर्म की हानि होती है, तब-तब भगवान अवतार लेते हैं। इस समय भगवान क्यों नहीं आ रहे हैं? इस प्रश्न के उत्तर में व्याकुल मन से प्रभु ने कहा-"मैं क्या करूँ, जब-जब भी अवतार लेने माँ के गर्भ में आया मेरा गर्भपात करवा दिया। मुझे सरकार, परिवार और माता-पिता ने जन्म लेने का मौका ही नहीं दिया।"

85. नियम

दस साल में पाँच सौ सामायिक करने का संकल्प कीजिये। एक हफ्ते में एक ही सामायिक का प्रीमियम है। श्रेष्ठता (क्वालिटी) के साथ संख्या (क्वांटिटी) तथा दोनों के साथ सातत्य (कंट्यूनिटी) आवश्यक है। सत्कार्य व शुभ कार्य में निरन्तरता आवश्यक है। मंजिल तक पहुँचने के लिए मील के पत्थर गिनना जरूरी नहीं, निरन्तर चलना जरूरी है।

86. आसक्ति व संयम

रावण में आसक्ति थी, इसलिये वो सीता को उठा लाया; परन्तु उसमें संयम था, इसलिये उसने एकान्त मिलने पर भी सीता को हाथ नहीं लगाया। दुर्योधन ने सभा के सामने द्रोपदी का चीर हरण किया। उसमें आसक्ति थी, पर संयम नहीं था। आसक्ति के बावजूद रावण की पवित्रता प्रशंसनीय है। उसने सीता से कहा–''तुम्हारी सम्मति के बगैर मैं आगे नहीं बढ़ूँगा।'' रावण के पास संयम था। जैन ग्रंथों के अनुसार रावण तीर्थङ्कर बनेगा। क्या आज के व्यक्ति में इतना संयम है। आसक्ति रावण की कमजोरी थी। संयम रावण की वीरता थी।

87. हैसियत

पैसा प्रारब्ध और पुरुषार्थ, दोनों से मिलता है। अगर पुरुषार्थ से ही मिलता तो सबको मिलता। अगर किसी से आपका पाँच लाख रुपये लेना हो और आपको पता चले कि अब उसके पास रुपये लौटाने की हैसियत नहीं है। उस समय आपके भाव कैसे रहते हैं। क्या उसका वह कर्ज माफ कर सकते हो?

88. सरल-कठिन

साधु बनना सरल है या संसार चलाना सरल है? अगर कोई आपसे राय लेता है कि उसे साधु बनना है तो आप उसे क्या सलाह देंगे? पैदल

चलना पड़ेगा, केशलोच करना पड़ेगा, आहार के लिए घर-घर भटकना पड़ेगा। अनेक कठिनाइयाँ बताकर उसका मन कमजोर करने का प्रयत्न करते हो। गृहस्थ जीवन चलाने में कितनी कठिनाइयाँ, चिन्तायें और तकलीफें हैं, यह नहीं बताते। किसी को साधु बनने से मत रोको। दुर्जन बनने से रोको।

उदारता

जो भाग्यशाली है वह उदार होता है और उदारता से ही आदमी भाग्यशाली बनता है। उदार दे-दे कर अमीर बनता है। लोभी जोड़-जोड़ कर गरीब बनता है। उदारता पापों को ऐसे बदल देती है, जैसे पारस लोहे को बदल देता है। उदार आदमी जब तक जीता है आनन्द से जीता है और तंग दिलवाला जिन्दगी भर दुखी रहता है। संत कवि तिरुवल्लुवर ने ठीक ही कहा था कि दिलदार आदमी का वैभव गाँव के बीचोंबीच उगे हुए और फलों से लदे हुए वृक्ष के समान है।

89. स्वयं को जानें

इस जीवन में हमें प्रकृति से भरपूर मिला है। स्वस्थ कान, आँखें, नाक, हवा, पानी, धरती; ये अनमोल चीजें प्रकृति से प्राप्त हुई हैं। नींद लाई नहीं जाती, अपने आप आती है और अपने आप खुल जाती है। हृदय अनवरत धड़कता रहता है। चोट ठीक हो जाती है। ये सब प्रकृति के चमत्कार हैं। इन सब अनुकूलताओं में हम देह को साधें और देही (आत्मा) को जानें।

90. प्रायश्चित

एक सी.बी.आई. का अफसर मिला। मैंने पूछा, ''आप कौन हैं?''

वह बोला, ''मैं पहले इंसान हूँ, उसके बाद सी.बी.आई. का अफसर हूँ। जब मैं किसी अपराधी को सजा देता हूँ तो यह समझकर कि यह मेरा कर्त्तव्य है। सजा देते समय इतनी पीड़ा होती है कि मैं उसके प्रायश्चित में तीन दिन एक ही वक्त खाना खाता हूँ।'' क्या आपमें से है कोई ऐसा व्यक्ति

जो बताये कि जिस दिन क्रोध करते हो, उस दिन मिठाई नहीं खाते हो या कोई प्रायश्चित करते हो।

91. ब्रह्मचर्य

एक दम्पती को शादी किये पन्द्रह साल हो गये। रात को बारह बजे उठकर पत्नी ने पति से निवेदन किया–''पतिदेव! पन्द्रह बरस बीत गये, मुझे इस उपलक्ष्य में एक भेंट दो।''

पति बोला–''जो चाहे सो माँग ले।''

पत्नी बोली–''पतिदेव! आज से आगे हम ब्रह्मचर्य का पालन करें।''

कितनी अपूर्व अनमोल भेंट और उसी समय दोनों अलग–अलग शैय्या पर सोने चले गये। कभी रात में उस दम्पती को याद करो।

92. निर्णय

वृक्ष के नीचे बैठे एक फकीर को यात्री ने पूछा–''मैं पड़ोस के गाँव में कब पहुँचूँगा।''

फकीर बोला–''मैं जब तक तुम्हारी चाल नहीं देख लेता, तब तक नहीं बता सकता हूँ कि तुम कब पहुँचोगे।''

जब यात्री वहाँ से चला, तब पीछे से फकीर ने उसे कहा–''तुम दो घण्टे में पहुँचोगे।'' बात मोक्ष की हो या सांसारिक सफलता की, किसी की क्षमता और योग्यता के आधार पर ही निर्णय किया जा सकता है।

93. संतोष

आपके पास दो करोड़ से दस करोड़ हो गये। पहले दो गाड़ियाँ थीं, अब पाँच हो गईं। आपकी सम्पदा बढ़ने से आपका अहंकार बढ़ गया। परन्तु क्या आपकी इन वस्तुओं से लोग खुश हैं? अगर आपसे ये वस्तुएँ ले ली जाएँ तो आपका क्या अस्तित्व रहेगा? वस्तु गई, आप गये! वस्तु का

गुमान कहाँ तक रहेगा? गरीब के घर में संतान होती है। अमीर के घर में वारिस होते हैं। घर में पचास रोटी की जरूरत है तो कितनी बनाओगे। साठ या पैंसठ। पाँच सौ तो नहीं बनाओगे। एक दिन का खर्च 500 है तो 700 कमाओ या 1,000 कमाओ। फिर इससे आगे क्यों दौड़ते हो?

94. अतृप्ति

सागर में अगणित नदियाँ समा गईं, लेकिन वो अतृप्त है। श्मशान में कितनी ही अर्थियाँ गईं, लेकिन वो भी अतृप्त है। हमारे पेट में कितनी रोटियाँ गई, लेकिन वो भी अतृप्त है। मोटे तौर पर हिसाब लगायें, एक दिन में 5 रोटियाँ, महीने में 150, साल में 1,800 और तीस साल में 54 हजार रोटियाँ। अन्ततः पेट में कितनी बची हैं? तृष्णा को तृप्त करने में सारी जिंदगी समाप्त हो जाती है, परन्तु वह अतृप्त ही रहती है।

95. सामायिक

एक युवक को कहा गया कि भाई रोजाना सामायिक किया करो। युवक बोला, अभी मौज मस्ती करने के दिन हैं। वही युवक जीवन बीमा करवाने के समय कहता है कि जीवन का क्या भरोसा है? सामायिक करने की प्रेरणा के वक्त और जीवन बीमा के वक्त विचारों में कितना अन्तर! सांसारिक भौतिक आकर्षण सामायिक साधना के लिए समय नियोजित नहीं करने देते हैं। सामायिक साधना के लिए समय निकालना पड़ता है।

96. मन

एक भिखारी एक राजा के पास गया। अपना भिक्षा पात्र सामने रखकर बोला-''राजन्! मेरा भिक्षापात्र भर दो।'' राजा ने सिपाहियों को आदेश दिया कि इसका पात्र स्वर्ण मोहरों से भर दिया जाय। सिपाही मोहरें डालते-डालते थक गये, लेकिन पात्र खाली का खाली। खजाने का पूरा

स्वर्ण डाल दिया तो भी पात्र भरा नहीं। तब हार मान कर राजा ने भिखारी से पूछा, ''यह भिक्षापात्र किसका बना है?''

तब भिखारी बोला, ''राजन्! यह भिक्षापात्र नहीं है। आदमी का मन है। आदमी तो क्या भगवान भी इस मन के आगे हार गये।''

97. ऐसा भी होता है?

एक व्यक्ति एक भिखारी से मिला। बोला-''मुझे तुम्हें भोजन खिलाना है।''

वह बोला-''आप हमारे लीडर से मिलो।''

वह व्यक्ति भिखारी के लीडर के पास गया, बोला-''मुझे आप लोगों को भोजन खिलाना है।''

वो लीडर बोला-''मेरे पास 45 दिन की बुकिंग है, आपको 46वाँ दिन बुकिंग कराना है।''

हमेशा भिखारी सेठ को ढूँढता है, आज सेठ भिखारी को ढूँढता है। एक आदमी को दान करना था। दिनभर कोई मौका दान का नहीं मिला। सोते समय याद आया आज दान नहीं कर पाया। दस रुपये का दान करने मोटर लेकर निकला। दो सौ रुपये का पेट्रोल जलाया। एक सोते हुए भिखारी को उठाया। भिखारी बोला-''आगे जाओ, अभी कुछ नहीं चाहिये।''

98. इन्द्रिय-पराधीनता

कंचन और कामिनी के पीछे हीरा-जन्म बर्बाद करता रहा। उन्हीं के पीछे जीवन की शक्तियों को स्वाहा करता रहा। अरे देवानुप्रिय! देवताओं को भी प्रिय! ऐसा नरजन्म पाकर भी तूने जप किया नहीं, तप किया नहीं, सामायिक की नहीं, पौषध किया नहीं! पाँचों इन्द्रियों की पराधीनता में

फँसकर मौज, शौक, ऐश-आराम व विषय-भोगों में लीन होकर अनेक कर्मों के ढेर के ढेर इकट्ठे करते रहता है।

99. चौरासी का चक्कर

हमें तो सहज में जैन धर्म मिला है। महावीर वाणी सुनने का सौभाग्य मिला है। पाँचों इन्द्रियाँ मिली हैं। स्वस्थ शरीर मिला है। सन्तों का सान्निध्य मिला है। शास्त्र-श्रवण की योग्यता मिली है। सत्कार्य और धर्माराधना करने का वक्त मिला है। यह सब प्राप्त होने पर भी हमने जीवन को सफल नहीं बनाया तो अब भी विराट अनंत भविष्य काल मुँह फाड़कर हमारे सामने खड़ा है।

100. हे मानव!

हे मानव! मान चाहे मत मान, तीन दुश्मन तेरे पीछे छल-छिद्र ढूँढ रहे हैं। रोग, बुढ़ापा और मृत्यु; इन तीनों में से एक के भी झपाटे में आ जाने से तेरा अभिमान चूर-चूर हो जायेगा। इधर की सारी मेहनत बेकार हो जायेगी। हे बुद्धि के भंडार! इन सबका उपाय तुझे मोह की बेहोशी से न सूझता हो तो मैं कहता हूँ। उस समय तेरा संरक्षक एकमात्र धर्म होगा। दूसरी कोई सच्ची शरण नहीं होगी। आत्म-विकास और शाश्वत-सुख के लिए धर्म की आराधना प्रत्येक पल में होनी चाहिये। जगत के सभी साधनों में धर्म के साधन सर्वोपरि हैं। पूर्व में की हुई धर्म की आराधना से यहाँ आनंद है। अगर मानव-जन्म पाकर भी धर्माराधना के बिना जीवन बितायेगा तो संसार की अनन्त मुसाफिरी दुःखमय हो जायेगी।

101. हे जीव!

हे जीव! नरक के दारूण दुःखों का भान कर। तिर्यंच योनि की पीड़ाओं का खयाल कर। मनुष्य योनि में भी कुकर्मों के कारण किस तरह की यातनाएँ लोग भोग रहे हैं, कष्टों से तड़फ रहे हैं, निर्धनता व गरीबी से

छटपटा रहे हैं; रोग, शोक, भय, पीड़ा, बीमारी आदि अनचाहे कष्टों से परेशानियों का सामना कर रहे हैं। करोड़ों मनुष्य पैसे के अभाव में उचित चिकित्सा नहीं करवा रहे हैं, नाना प्रकार के असाध्य रोगों को रोते-रोते छटपटाते सहन कर रहे हैं। यह सब देखकर भी अगर तू धर्मकरणी से मुख मोड़ रहा है तो चेतन तू ही सोच, तेरा भला कैसे होगा?

102. काल की घण्टी

अनंत पुण्यवानी के फलस्वरूप यह अनमोल मानव-जीवन व जैन धर्म प्राप्त हुआ है। महावीर वाणी सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। धर्म करने योग्य सभी सुख-साधन प्राप्त हुए हैं। संत-सतियों का सान्निध्य प्राप्त हुआ है। पर्याप्त धन वैभव प्राप्त हुआ है। काल की घण्टी बजते ही एक क्षण में धन, वैभव, खेत, जमीन, बंगला, कोठी, बैंक बेलेंस, सब पर दूसरे का अधिकार हो जायेगा, ठप्पा लग जायेगा। अतः समय रहते जाग जाना चाहिये।

103. भयातीत वैराग्य

विषयों को हमने नहीं भोगा, किन्तु विषयों ने हमको भोग लिया! हमने तप को नहीं तपा, किन्तु तप ने हमें तपा डाला। काल का खात्मा न हुआ, किन्तु हमारा ही खात्मा हो चला। तृष्णा का बुढ़ापा न आया, किन्तु हमारा बुढ़ापा आ गया। विषयों को भोगने में रोगों का भय है, कुल में दोष होने का भय है, धन में राजा का भय है, चुप रहने में हीनता का भय है, बल में शत्रुओं का भय है, सौन्दर्य में बुढ़ापे का भय है, शास्त्रों में विपक्षियों के वाद का भय है, गुणों में दुष्टों का भय है, शरीर में मौत का भय है, संसार की बनी चीजों में मनुष्य का भय है। केवल वैराग्य में किसी प्रकार का भय नहीं है।

104. बुढ़ापा

बाहर गाँव जाते हो, बैग तैयार किया जाता है। बैग में जो कपड़े पीछे से भरे जाते हैं, वे ऊपर रहते हैं। गन्तव्य तक पहुँचने पर बाद में रखे हुए कपड़े पहले निकलते हैं। जीवन के अंतिम समय में या संध्याकाल में जो

पुण्य या पाप किया है, वो अंतिम समय का कार्य ही परभव में सबसे पहले सामने आयेगा। इसलिये जो 60 या 70 तक पहुँच गये हैं, वो इस बात को अच्छी तरह समझ लें।

105. सद्भाव

मित्रो! सुखी जीवन का राज सिर्फ इतना-सा है कि हम अभाव में नहीं, सद्भाव में जिएँ। कर्तापन के बोझ को अपने सिर से उतार फेंके और अहंकारशून्य, सच्चाईपूर्ण जीवन यापन करें। प्रदर्शन से बचें और अध्यात्म की दिशा में गतिशील बनें। जीवन में तर्क को प्रश्रय न दें। क्योंकि जहाँ तर्क है, वहाँ नर्क है, वहाँ संघर्ष, विवाद और दुःख है। जहाँ समर्पण है, वहाँ स्वर्ग है, प्रेम है, संवाद है, सौहार्द है।

106. अहंकार

रावण की कहानी उसके अहंकार की कहानी है। जिसके राज-दरबार में दस-दस दिग्पाल सेवकों की भाँति हाथ जोड़े खड़े हों, उस महाबली रावण लंकेश का वे वनवासी राम क्या बिगाड़ सकते थे। बस रावण का इतना अहंकार ही उसे ले डूबा। अहंकार के कारण न सिर्फ रावण, प्रत्युत लंका की अभेद्य प्राचीरों की ईंट से ईंट बज गई।

कंस ने अपने बल के अहंकार में चूर होकर निर्दोष प्रजा पर घोर अत्याचार किए। यहाँ तक अपने पिता को लोहे के पिंजड़े में कैद कर दिया। अपनी बहन को कारागृह में डाल दिया और अपने भानजों की निर्मम हत्या कर दी। जब कृष्ण युवा हुए तो उन्होंने कंस के अत्याचारों से सबको मुक्ति दिलाई।

अहंकार दुःख है, रोग है, पीड़ा है, नर्क है। अहंकार ठग और मीठा बदमाश है, जो हमें हर पल ठग रहा है। हम अपने लिये नहीं जीते हैं, दूसरों

के लिए जीते हैं, प्रदर्शन में जीते हैं। हम वास्तव में जो होते हैं, वह प्रकट रूप में किसी को दिखाते नहीं हैं और जो नहीं होते हैं, उसे दिखाने का प्रदर्शन करते हैं।

107. मान-पत्र

किसी व्यक्ति की ओर से दस हजार रुपये का दान मिलने पर उसे मानपत्र दिया जाता है। उसी व्यक्ति का नाम जब किसी प्रकरण में पुलिस की सूची में आ जाता है तब वह पुलिस/अफसरों को दस हजार रुपये इसलिये देता है कि सूची से उनका नाम काट दिया जाय। कारण स्पष्ट है, एक तरफ मान की आकांक्षा और दूसरी तरफ मानहानि का भय।

आज तक का इतिहास उठाकर देख लीजिये, एक भी उदाहरण ऐसा नहीं मिलेगा कि किसी को क्रोधपत्र दिया गया हो, मायापत्र दिया गया हो या लोभपत्र दिया गया हो। लेकिन मानपत्र देने की परम्परा पुराने जमाने से लेकर वर्तमान युग तक कायम है। किसी को क्रोधपत्र दो तो झगड़ा करने बैठ जायेगा, लेकिन मानपत्र हजारों की उपस्थिति में तालियों की गड़गड़ाहट के साथ लेने में हर व्यक्ति गौरव व आनंद का अनुभव करता है।

108. मृदुता

एक चीनी सन्त ने अन्तिम समय में अपने शिष्यों को बुलाया और कहा, ''तनिक मेरे मुँह में झाँको और देखो कि कितने दाँत शेष हैं ?'' प्रत्येक शिष्य ने देखा और कहा कि गुरुदेव, दाँत तो कभी के टूट गये। मुख में एक भी दाँत नहीं है। गुरु ने पूछा, ''जिह्वा तो है?'' शिष्यों ने कहा, ''हाँ।'' तब गुरु ने पूछा, ''दाँत बाद में आये और पहले चले गये। जिह्वा जन्म से आई और मरने तक रही। आखिर ऐसा क्यों?''

शिष्यों को मौन देखकर सन्त ने रहस्य खोलते हुए कहा, ''कठोरता

अल्पजीवी होती है। दाँत कठोर होते हैं, अतः जल्दी टूट जाते हैं। मृदुता दीर्घजीवी होती है। जिह्वा मृदु होती है, उसमें हड्डी नहीं होती है, इसलिए वह जीवन के अंतिम क्षणों तक बनी रहती है।''

109. चापलूसी

मंत्री ने एक दिन बैंगन को अच्छा बताया। दूसरे दिन राजा की हाँ में हाँ मिलाकर कहा, ''हाँ अन्नदाता! उसका अंग भी कैसा भद्दा व काला कलूटा होता है। पित्तवर्धक और बहुबीजी भी होता है।''

एक व्यक्ति ने दोनों दिन की बातें सुनी थीं। उसने कहा, ''मंत्रीजी! उस दिन तो आपने बैंगन की प्रशंसा के पुल बांध दिये थे और आज उसकी बुराई कर रहे हो।'' मंत्री ने कहा, ''अरे भले आदमी! हम बैंगन के नौकर नहीं, हम तो राजा के नौकर हैं। राजा को खुश करना ही हमारा जीवन है।'' चापलूस व्यक्ति ऊपर से बड़ा शरीफ व नेक दिल मालूम पड़ सकता है, मगर वैसा होता नहीं है। स्वार्थ और चालाकियाँ उसके जीवन में प्रवेश कर जाती हैं।

आस्था

जिन पत्थरों पर 'राम' लिखा था, वे सब सेतुबंध के समय पानी में तैरने लगे। राम ने एक पत्थर अपने हाथ में लिया और ज्यों ही पानी में डाला तो पत्थर डूब गया। हनुमान यह सब देख रहे थे। राम ने कहा, ''हनुमान! यह बात तुम किसी को बताना मत।'' हनुमान बोले, ''मैं तो सबसे कहूँगा।'' राम ने पूछा, ''बताओ क्या कहोगे?'' हनुमान ने हाथ जोड़कर कहा, ''कहूँगा क्या, यही कि जिसे रामजी छोड़ दें, वह डूबेगा नहीं तो और क्या होगा?'' बात विश्वास और आस्था की है।

110. धर्म

धर्म प्यार की पेढ़ी है। धर्म सत्कर्म की साधना है। धर्म विश्वास का व्याकरण है। धर्म अपनत्व का आचरण है। धर्म आत्मीयता के आंगन में

अहिंसा का अनुष्ठान है। धर्म शालीनता की शाला और मानवता का मदरसा है। धर्म प्रेम के पुल और सौहार्द का सेतु बनाता है। धर्म वैमनस्यता का विसर्जन और सौमनस्यता का सर्जन है। धर्म संकीर्णता की सड़ांध नहीं, सहिष्णुता की सुगंध है।

धर्म कोई घंटे, आधे घंटे में पूरा होने वाला क्रियाकर्म नहीं है। धर्म तो वह अनुष्ठान है, जिसे आठों याम जिया जाना चाहिये। धर्म एक समग्र चिन्तन है, जिसे अहर्निश जीवन में चरितार्थ किया जाना चाहिये। स्थानक, मन्दिर आदि धर्मस्थल तो धर्म के प्रशिक्षण की सिर्फ पाठशालायें हैं। धर्म की प्रयोगशाला तो संसार और जीवन के व्यवहार ही हो सकते हैं।

धर्म का जागरण जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना है। जब अंतरंग में धर्म प्रगट होता है तो व्यवहार में पवित्रता, विचारों में सरलता, स्वभाव में विनम्रता और हृदय में उदारता जैसे सदगुण प्रतिबिम्बित होने लगते हैं। अतः धर्म का जागरण जीवन का प्रमुख लक्ष्य होना चाहिए। धर्म को सर्वप्रथम सुनना चाहिये, पर किसी फिल्मी गीत की तरह नहीं, अपितु मंत्र की तरह; जो हृदय में समाहित और आचरण में प्रतिबिम्बित हो।

111. असली दौलत

जीवन की सच्ची संपत्ति आत्म-संपन्नता है। रुपये-पैसे तो हाथ का मैल है। पुण्य का विपाक है। इससे आत्मा का क्या सम्बन्ध। असली धन तो वह है जो परलोक में भी साथ जाय। छल-फरेब से अर्जित दौलत किसी के साथ जाने वाली नहीं है। इतिहास कहता है कि जहाँगीर के साथ नूरजहाँ नहीं गई। सिकंदर के साथ तख्त और ताज नहीं गया। महाराणा रणजीत सिंह के साथ कोहिनूर का हीरा नहीं गया। शाहजहाँ के साथ दिल्ली का लाल किला नहीं गया। रावण के साथ स्वर्ण नगरी नहीं गई। हम विचार करें कि हमारे साथ क्या जायेगा? काल के आगे इन विश्वविश्रुत बहादुरों और नरेशों की नहीं चली तो हमारी क्या चल पायेगी।

112. मानवता

एक अनुमान के अनुसार विश्व में प्रति सेकंड तीन व्यक्ति और प्रतिदिन लगभग ढाई लाख व्यक्ति (स्त्री-पुरुष) पैदा हो रहे हैं। क्या पैदा होने वाले सभी मनुष्य हैं? क्या वे मानवीय गुणों से युक्त हैं। आकृति से मनुष्य होना एक बात है और प्रकृति से होना दूसरी बात है। आकृति मात्र से मनुष्य होने से मानवता नहीं मिल जाती। जब व्यक्ति प्रकृति से मानव होता है, तब मानवता को उपलब्ध होता है। मानवता को प्राप्त करना ही मानवता का लक्ष्य है। इसके लिए जरूरी है कि सिर्फ आकृति से नहीं, प्रत्युत प्रकृति से भी मनुष्य बनें।

113. समय की मार

सड़क के किनारे एक पुलिया पर कुछ युवक बैठे थे। एक सन्त ने उनसे पूछा, ''मित्र! क्या कर रहे हो?'' उन्होंने कहा, ''कुछ नहीं, बस समय काट रहे हैं।''

सन्त ने कहा, ''तुम क्या समय को काटोगे, समय ही तुम्हें काट रहा है। और ऐसा काट रहा है कि कुछ दिनों बाद तुम्हीं देखोगे कि तुम कुछ काम के नहीं रहे।'' समय की मार बहुत गहरी होती है।

114. प्रमाद

जौहरी दौड़कर आया और कुम्हार को डाँटते हुए कहा, ''अरे पागल! यह तो लाखों की चीज थी जो तूने सौ रुपये में दे दी। जिसे तू सामान्य चमकीला पत्थर समझ रहा था वह बहुमूल्य हीरा था। मूर्ख! तू आज लुट गया, पिट गया।''

कुम्हार ने कहा, ''पागल मैं कि तू? जब तुझे मालूम था कि ये लाखों की चीज है तो तूने इसे क्यों छोड़ दिया? क्यों नहीं खरीद लिया? लाखों का हीरा एक रुपये में क्यों नहीं लिया? मैं तो अनपढ़ गँवार हूँ, पर तुम

तो जौहरी हो। जौहरी ही हीरे की कीमत व कद्र जानता है। फिर तुमने इसकी कीमत क्यों नहीं जानी? इसकी कद्र क्यों नहीं की? मैं तो इसे सामान्य पत्थर समझ रहा था और मुझे तो सौ रुपये मिल भी गये। पर तुम्हारी तो किस्मत ही फूट गई। अब बोलो पागल मैं हुआ कि तुम?''

जौहरी अपने प्रमाद पर शर्मिन्दा हुआ। जौहरी जैसी ही स्थिति आज के मानव की है। जिस शरीर से विराट् परमात्मा को पाया जा सकता है, वह उसे क्षुद्र भोगों में लगा देता है। जिस जीवन को तीर्थ बनाकर जीना था, उसे उसने तमाशा बना डाला। क्या यह पागलपन नहीं है?

115. पाई-पाई का हिसाब

बहीखातों में सबसे पहले प्रायः परमात्मा को नमस्कार लिखा जाता है। ऊपर परमात्मा का नाम लिखकर नीचे लाइन खींच दी जाती है। अर्थात्, प्रभु! आप नीचे मत देखो। सारे खोटे काम हमें नीचे करने दो। प्रभु परमात्मा को भी फँसाने का काम मनुष्य करता है। पाप छिपाय नहीं छिपता है। यहाँ के बहीखाते कितने ही काले कर दो, ऊपर तो राई-राई व पाई-पाई का हिसाब देना है। जिस बंगले को आपने बड़े कष्ट से बांधा है उसी बंगले से लोग हमें आखिर में बांधकर निकालेंगे।

116. मर्यादा

हर आदमी को अपना जीवन सात्विक और मर्यादित बनाना चाहिये। बंधन के बिना जीवन स्वछंद बन जाता है। खेत में बाड़ आवश्यक है। भूखण्ड के चारदीवारी आवश्यक है। इसी प्रकार जीवन को मर्यादित करना आवश्यक है। मर्यादा-विहीन जीवन की कीमत कचरा-कचरा हो सकती है। अतः संकल्प, शपथ और नियमों से अपने जीवन को सुरक्षित करना जरूरी है। वरना जिंदगी व्यसनों से कभी भी पतन के गर्त में गिर सकती है।

पैसा बढ़ने के बाद निर्भयता बढ़ी या भय बढ़ा ? पैसा बढ़ने के बाद या तो पैसे की मर्यादा कीजिये या उम्र की मर्यादा कीजिये। सौ करोड़ की मर्यादा कीजिये या 75 साल की उम्र तक कमाओगे, ऐसी मर्यादा कीजिये। दोनों में से एक निर्णय तो करना चाहिये। दिन-रात पैसे के ही पीछे दौड़ना उचित नहीं है।

117. व्यसन

पहले मनुष्य दारू के प्याले को पकड़ कर दारू पीता है। बाद में वह प्याला ही आदमी को जकड़ कर पकड़ लेता है। फिर छूटना मुश्किल हो जाता है। जो पीना नहीं चाहिये, उसको जो पीता है उसके बारे में कहा जाता है कि वो पीता है। जो खाना नहीं चाहिये उसको अगर आदमी खाता है तो उसे कहा जाता है कि वो खाता है।

118. भाषण व प्रवचन

आज खुद की, कल परिवार की, परसों राष्ट्र की! पंडित बातों का बादशाह होता है और संत आचरण का आचार्य होता है। जो कीचड़ में कमल की तरह जी रहा है, वह ज्ञानी और कीचड़ में कीड़े की तरह जी रहा है, वह अज्ञानी। जो हंस की तरह जी रहा है, वह ज्ञानी और जो चील की तरह जी रहा है, वह अज्ञानी। भाषण और प्रवचन में इतना सा अन्तर है कि भाषण दिया जाता है और प्रवचन जिया जाता है। भाषण बौद्धिक व्यायाम है, जबकि प्रवचन जीवन का निचोड़ है।

119. धर्म और धंधा

अभी तो महावीर मंदिरों में है और आप मंडी में। जब तक ये मंदिर और मण्डी की दूरी रहेगी, फासला रहेगा, तब तक जीवन में क्रान्तिकारी

परिवर्तन संभव नहीं है। मैं चाहता हूँ कि महावीर मंडी के जीवन में भी आपके साथ रहें ताकि आप वहाँ महावीर रूपी आईने में अपने आचरण को देखते रहें और न्याय-नीति से धनार्जन कर सको। यदि आपके साथ मंडी (बाजार/व्यवसाय) में महावीर होंगे, राम होंगे, कृष्ण होंगे तो आप वहाँ ऐसा कोई काम नहीं कर सकेंगे, जो नहीं करना चाहिये। (मुनि तरुणसागर)

120. सम्यग्दृष्टि

सम्यग्दृष्टि आत्मा पापस्थान को पापस्थान रूप में ही मानता है। हिंसा प्रथम पापस्थान है। वह त्यागने की शक्ति हो तो उसे पूर्णतः त्याग देता है। नहीं तो संकल्प पूर्वक निरपराधी जीवों को मारने के प्रत्याख्यान करता है और निरर्थक हिंसा न हो, ऐसा प्रयत्न करता है। सप्रयोजन हिंसा परिवार, समाज, देश, संघ आदि के कार्यों के निमित्त से होती है, तो उसमें यथाशक्य विवेक रखता है। वह उसे न तो अन्यथा रूप में मानता है और न उसमें आसक्त ही होता है। क्योंकि उसका मनोरथ तो सर्वविरति का ही रहता है। (उमेशमुनि 'अणु')

121. महापुरुष सबके

क्या धर्मस्थल कारागृह जैसे नहीं हो गये हैं? आज हमने भगवान महावीर को भी कैद कर दिया है। महावीर की देशना तो प्राणिमात्र के लिए है, लेकिन उनके जिओ और जीने दो के सिद्धान्त को हम मंदिरों में दोहराते रहते हैं, मंदिर में ही भगवान महावीर को सुनाते रहते हैं। मैं चाहता हूँ कि महावीर जैनों से मुक्त हो ताकि उनका संदेश, उनकी चर्या, सबके सामने आ सके। मैं महावीर को सार्वजनिक बनाना चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि भगवान महावीर जैनों की बपौती न रहें, वरन सबके आदर्श बने। संत, सड़क, सत्य, सरिता, समय और सर्वज्ञ ये किसी की पैतृक सम्पत्ति नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण विश्व की धरोहर है।

हम महापुरुषों पर अधिकार न जतायें। जिस प्रकार वैद्य, हकीम, चिकित्सक सबके लिए होते हैं और सभी उनका लाभ उठा सकते हैं, उसी प्रकार संत, आचार्य और महापुरुष सभी के लिए होते हैं। हम सभी महापुरुषों में जो श्रेष्ठ गुण हैं, उन्हें ग्रहण करें। मर्यादा पुरुषोत्तम राम की कर्त्तव्यनिष्ठा, श्रीकृष्ण का कर्मयोग, तीर्थङ्कर महावीर की अहिंसा, महात्मा बुद्ध की करुणा, गुरुनानक का साम्य, कबीर का फक्कड़पन, जीसस की क्षमा और मुहम्मद का ईमान, ये सभी के लिए अनुकरणीय हैं। वैचारिक स्वतन्त्रता और मतभेद होना बुद्धिमत्ता और प्रगति के द्योतक हैं। किन्तु धर्मों के नाम पर लड़ना, झगड़ना, वैर-विरोध को बढ़ावा देना, हथियार उठाना, खून-खराबा करना सत्य का खून करना है। सत्य-पथ पर चलने के लिए आहार, विहार, विचार और आचार शुद्ध रखने चाहिये।

122. युग

आज विवेक का नहीं, विज्ञापन का युग है। चिन्तन का नहीं, चाटुकारिता का युग है। चरित्रवान मनीषियों का नहीं, चरित्रहीन चमचों का युग है। सत्यशोधकों का नहीं, सत्तालिप्सुओं का युग है। शब्द-साधना का नहीं, शब्दजाल का युग है। आचार का नहीं, प्रचार का युग है। दूरदृष्टि का नहीं, दूरदर्शन का युग है। आचरण का नहीं, भाषण का युग है। देशभक्तों का नहीं, देश दलालों का युग है। बुद्ध पुरुषों का नहीं, बुद्धिजीवियों का युग है। प्रज्ञा पुरुषों का नहीं, पंडितों का युग है। परमेष्ठियों का नहीं, पाखंडियों का युग है। हम स्वयं को बदलेंगे तो युग भी बदलेगा।

123. प्रार्थना व श्रम

दो बहिनें थीं। उन्हें स्कूल पहुँचने में देर हो गई। परीक्षा का समय था। अब क्या करें, कैसे पहुँचे, कोई साधन नहीं। एक बहिन बोली, ''हम दोनों यहीं बैठकर प्रभु से प्रार्थना करें कि वो हमें ठीक समय पर स्कूल में पहुँचा दे।'' दूसरी बहिन बोली, ''बैठने से काम नहीं होगा। हम चलते रहें

व दौड़ते-दौड़ते प्रभु से प्रार्थना करें तो शीघ्र पहुँच सकते हैं।'' मेहनत करो और प्रभु से प्रार्थना करो।

124. आशीर्वाद

एक छात्र परीक्षा में बैठने के पहले सन्त के पास आशीर्वाद लेने गया। उसने वर्षभर पढ़ाई नहीं की थी। सन्त ने पूछा, ''सालभर पढ़ाई नहीं की, अब क्या आशीर्वाद लेने आया है।''

तब छात्र बोला, ''मुझे परीक्षा में नकल करने का भाव भी नहीं आये, इतना आशीर्वाद चाहिये।''

इसी प्रकार एक दुकानदार अपनी दुकान के उद्घाटन के समय सन्त के पास आशीर्वाद लेने गया और हाथ जोड़कर निवेदन किया, ''महाराज! मुझे आशीर्वाद दीजिये कि धन्धा करते समय अनीति की बुद्धि नहीं आये।''

125. टालमटोल

एक कारखाने का मालिक एक महिला को पदोन्नति देना चाहता था। सायं 5 बजे जब वह महिला के दफ्तर में गया और उसने महिला को एक काम करने को कहा। वह बोली यह कार्य कल कर दूँगी। इतने में मालिक का पदोन्नति का विचार ही बदल गया। वह महिला समझ ही नहीं पाई कि वह खुद अपनी प्रगति में बाधा बन गई। कभी-कभी हम खुद हमारे दुश्मन हो जाते हैं।

126. पानी से पहले

पानी आने से पहले पाल बांध लेने वाला समझदार समझा जाता है। पाल बांधी नहीं और पानी भर गया, तालाब फूट गया, चारों ओर से पानी बहने लग गया, उस समय पाल बांधी नहीं जा सकेगी। सोचा हुआ पार नहीं पड़ेगा। मन की मन में रह जायेगी। सारे मनोरथ मिट्टी में मिल जायेंगे। उस समय पश्चात्ताप का, संताप का पार न रहेगा। अपनी ठीक हालत में मिली

हुई शक्तियों का सदुपयोग कर लेने के लिए विचार कर। सब अवस्था में काम आये और सर्वत्र निश्चिन्त बना दे, ऐसा भाता साथ में भर ले। मोह-नींद से जागरण में आ जा। फिर कोई भी अवस्था तुझे नहीं सतायेगी। तू सदा भरपूर आनंद का अनुभवी हो जायगा। आत्म-तारक धर्म क्रिया और तत्त्वज्ञान का अभ्यास; ये दोनों सच्चे आनंद देने वाले ऊँचे साधन हैं।

127. देह का सदुपयोग

भोजन व भाषण में समय जा रहा है। भजन में एक घण्टा भी मन नही लगता। आँख का उपयोग सिनेमा, टी.वी., नृत्य, अशोभनीय प्रदर्शन आदि निहारने में किया जा रहा है। कितने ही लोग रसना की तृप्ति के लिए मांसाहार और मदिरापान करते हैं। शाकाहार व दूध जैसी पवित्र भोजन सामग्री छोड़कर निर्दयी भोजन की ओर आकर्षण दुःखों का कारण है। जो खाना चाहिये उसे छोड़कर, जो अभक्ष्य है उसे भोजन बना रखा है। दुनिया की इस करुणामय स्थिति को देखकर हमारा हृदय पिघल जाना चाहिये। यह शरीर साधना, सेवा और परोपकार के लिए मिला है। उसका पूर्ण सदुपयोग किया जाना चाहिये।

128. शालीन परिधान

एक बार एक दुष्कर्म के मामले में न्यायाधीश ने आरोपी युवक को बरी कर दिया और युवती को 6 मास की सजा सुना दी। कारण यह बताया गया कि युवती की भड़काऊ वेषभूषा युवक की कामवासना को प्रज्वलित करने में निमित्त बनी। कपड़े नग्नता को ढकने के लिए पहनने चाहिये, नग्नता को प्रकट करने के लिए नहीं। अशालीन वस्त्र-विन्यास वासना की आग को प्रज्वलित करने में पेट्रोल का काम कर सकते हैं।

129. पड़ोसी

मम्मण सेठ और शालिभद्र दोनों के जीवन में पड़ोसियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा। पूर्वभव में दोनों ने सुपात्रदान दिया था। मम्मण सेठ ने निंदा

कर सुकृत्य को जला दिया। मम्मण सेठ ने मुनि को स्वादिष्ट लड्डू बहराया था, परन्तु वापस माँगने गया। साधुजी ने वापस न दिया व धूल में परठा दिया, जिससे मम्मण सेठ ने बहुत निंदा की। जबकि शालिभद्र ने सुकृत्य की अनुमोदना करके भव्य परम्परा खड़ी कर दी।

130. धर्मपत्नी

धर्मपत्नी का अर्थ है धर्म में प्रेरणा करने वाली पत्नी। जो पाप से तोड़े व धर्म से जोड़े वो धर्मपत्नी होती है। पति-पत्नी समान कुल, धर्म, शील वाले हों तो जीवन में दान धर्म की वृद्धि होती है।

उदार दिल कवि माघ की पत्नी के बारे में सुना है कि एक याचक माघ के पास कुछ लेने गया था। घर में कुछ नहीं था। नींद में सोई हुई पत्नी के हाथ में से माघ ने सोने का कड़ा खींचा। पत्नी जागी और पति से कहा पतिदेव क्या कर रहे हो? पतिदेव बोले, ''याचक आया, उसे देने के लिए तुम्हारे हाथ का सोने का कड़ा निकाल रहा था।''

पत्नी बोली, ''नाथ! तो एक कड़े से क्या होगा? दूसरा भी दे दो।'' माघ की आँखों में हर्ष के आँसू आने लगे। सख्त गरीबी में भी दिल की ऐसी अमीरी दिखाने वाली पत्नी की बात सुनकर।

131. आहार

सबसे बड़ा विटामिन भूख है। अगर भूख ही नहीं तो कैसा भी अच्छे से अच्छा भोजन करो शरीर में ताजगी नहीं आ सकती। हॉस्पिटल में जाकर पूछने पर पता चलेगा कि वहाँ ज्यादा खाने-पीने वाले रोगी ज्यादा आते हैं। तपस्वी रोगी तो बहुत कम आते हैं। पहले खाया हुआ पचे नहीं, अच्छी रुचि जगे नहीं, तब तक अच्छी से अच्छी खाने की वस्तु भी पेट में नहीं डालनी चाहिये। इससे शरीर में रोग होने की संभावना कम रहती है। समयबद्ध, शरीर के अनुकूल भोजन करने से जीवन में सदाचार, शील, सौजन्यता, उदारता, गंभीरता, सौम्यता वगैरह गुण प्रकट होते हैं।

132. सामाजिक अहिंसा

यूरोप में हॉलैण्ड एक छोटा-सा देश है। वहाँ की आबादी लगभग डेढ़ करोड़ है। वहाँ की राज्य व्यवस्था विकेन्द्रित है। सत्ता, पंचायतों या म्युनिसिपल कमेटियों के हाथ में है। केन्द्रीय व्यवस्था के पास कोई पुलिस बल नहीं है। समाज व्यवस्था मानवीय है। कह सकते हैं कि वहाँ अहिंसा का सामाजिक रूप सराहनीय है। वहाँ के परिवार गरीब देशों के गरीब परिवारों के बच्चों को अपने परिवार में दत्तक लेकर आत्मीयता से पालते हैं। वहाँ लगभग 40 हजार ऐसे बालक-बालिकायें हैं।

हमारे यहाँ भी लोग दत्तक लेते हैं; पर स्वार्थवश और वह भी लड़कों को। वहाँ यह परिपाटी मात्र मानवता की दृष्टि से है। घरों में और सार्वजनिक स्थानों पर वहाँ अच्छी साफ-सफाई रहती है। वहाँ न छल कपट है, न भ्रष्टाचार। हम हमारे यहाँ अमीर-गरीब, ऊँच-नीच, जाति-विजाति और न जाने कैसे-कैसे भेद बढ़ाकर हिंसा को बढ़ाते रहते हैं, और कहलाते हैं अहिंसाव्रती।

133. भूकम्प

धन का सारा ढेर; जिसके लिए झगड़े किये, वैर बढ़ाया, श्रम व समय का खर्चा किया, एक पल में मिट्टी का ढेर हो गया। जिस धरती से सोना निकला, सब उसी के उदर में चला गया। सरकार खाना दे सकती है, कपड़ा दे सकती है, मकान दे सकती है; परन्तु क्या कोई किसी को जान दे सकता है? भूकम्प से जो जान-माल का नुकसान हुआ है, इन्सान उसे पूरा नहीं कर सकता। आश्चर्य है कि इतना होने पर भी वह बेखबर है।

कभी जिनके हाथ दूसरों के लिए वरदान हुआ करते थे। कभी जिनकी तरफ हजारों लाखों आँखें आशाभरी नजरों से निहारती थीं। जिनके हाथों से सैकड़ों लोगों को दान मिला करता था। आज वो खुद ही दाने-दाने को

मोहताज बनकर दवा की भीख माँग रहे हैं। यहाँ सबकुछ बदलता है, मगर परिवर्तन का नियम नहीं बदलता।

134. दुर्लभ मानव जीवन

यह जीव कभी गाय, भैंस, बकरी, मुर्गी बना। विभिन्न कष्ट झेले। कभी कीड़ी, मकौड़े, मच्छर बना। कभी नरक तो कभी तिर्यंच गति में गया। कभी दवाखाने में दाखिल हुआ तो कभी दिवालियेपन ने घेर लिया। अनन्त पुण्योदय से यह दुर्लभ मानव-जन्म मिला है। जैन धर्म मिला। यह अपूर्व अवसर है धर्माराधना का। हे जीव! तू कभी तो सावधान हो। उठो राजा बाबू, उठो, सवेरा हो चुका है। अब सोने का समय नहीं है। समय बीतता जा रहा है। बचपन गया, जवानी गई, बुढ़ापा आ रहा है।

135. पुण्य

एक भाई ने अपनी बहिन की शादी करोड़पति के यहाँ की। वहाँ पर हर रोज दो-दो मिठाइयाँ बनती थी। नित नई मिठाइयाँ व नित नये पकवान। भाई सामान्य स्थिति का था। सुबह का बनाया शाम को खाना। चटनी, मिर्ची से लूखी रोटी खाना। बहिन कहती, ''भाई! कभी तो हमारे घर आओ। हमारे यहाँ रोज नित नई मिठाइयाँ बनती हैं।''

एक दिन भाई अपने व्यापार के काम से कहीं बाहर गाँव गया। रास्ते में बहिन का घर आता था। सोचा, बहिन प्रायः कहती रहती है, आओ-आओ। आज अनायास अवसर मिला है। रास्ते में गाँव है। बहन के घर ही खाना खा लेंगे। यह सोचकर वो भाई, बहिन के घर गया। खाने पर बैठा तो जो अपने घर पर चटनी-रोटी थी, वो ही उसकी थाली में आई! उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। भोजन के बाद जाते समय बहिन से पूछा, ''बहिन! तुम तो कहा करती थी कि तुम्हारे यहाँ नित नई मिठाइयाँ और पकवान बनते हैं। यहाँ तो वो ही चटनी-रोटी देखने को मिली।''

बहिन बोली, ''भाई! रोजाना मिठाइयाँ-पकवान खाते-खाते कंटाल आ गया, अतः शोक से हमने आज विशेष चटनी-फुलके बनाये हैं।'' यह है पुण्य का लेखा। कोई कितने ही प्रयास करे, पुण्य-बैंक के खाते में शेष (बेलेंस) के बगैर किसे क्या मिलता है?

दो मित्र। एक साथ दुकान की। एक ही गाँव में दोनों ने अलग अलग एक ही समय में दुकान लगाई। दोनों ने माल का भाव एक ही रखा। एक की दुकान अच्छी चल रही है। ग्राहकों की कतार लगी है। दूसरे की दुकान पर बारह बजे तक भी बोवणी नहीं होती। यह सब पुण्य और व्यवहार का खेल है।

136. भावना

सुबह आपसे कोई पूछे कि कहाँ जा रहे हो, तब आप कहते हैं कि प्रातःकालीन भ्रमण (मोर्निंग वॉक) कर रहा हूँ। ऐसा कहने की बजाय यह कहो कि भगवान के दर्शन करने जा रहा हूँ। स्थानकवासी यह कहें कि सुबह-सुबह संत-महासती के दर्शनार्थ जा रहा हूँ। ऐसा कहने से, ऐसी भावना रखने से कर्म निर्जरा होती है।

मासखमण के पारणे के वक्त अगर मन में किसी के प्रति गाँठ हो तो यह सही तपानुष्ठान नहीं होगा। इस दुनिया को खराब करने वाली हमारी भावना ही है, दूसरा कोई नहीं। हमारी पूरी साधना को खराब करने वाली, नष्ट करने वाली, हमारी भावना ही है।

137. 1-2 मार्च 2004 को आचार्य विजयरत्नसुन्दरसूरिजी द्वारा श्री रतनलाल सी. बाफना गोसेवा अनुसंधान केन्द्र (अहिंसा तीर्थ), कुसुम्बा (जलगाँव) में प्रदत्त प्रवचन के मुख्य अंश

इस पुस्तक के लेखक व संग्राहक श्री रतनलाल सी. बाफना द्वारा संस्थापित श्री रतनलाल सी. बाफना गोसेवा अनुसन्धान केन्द्र (अहिंसा तीर्थ), कुसुम्बा में जनसामान्य से लेकर देश-विदेश के विभिन्न क्षेत्रों और वर्गों की जानी-मानी हस्तियों का आगमन होता रहता है। यहाँ सन्तों का पदार्पण

भी होता है तथा उनके प्रवचन भी होते हैं। श्री बाफनाजी द्वारा लिखित डायरी नम्बर 28 में यह उल्लेख है कि अहिंसा तीर्थ में मार्च 2004 की पहली और दूसरी तारीख को विख्यात जैनाचार्य श्री विजयरत्नसुन्दरसूरिजी के प्रवचन हुए। अपने प्रवचन में आचार्यश्री ने कहा, ''गोशाला प्रांगण में आकर तथा गायों और मूक प्राणियों के लिए तबीयत (उदार हृदय) से की गई सुन्दर व्यवस्था देखकर तबीयत बाग-बाग हो गई।'' प्रवचनों के जो मुख्य बिन्दु श्री बाफनाजी ने अपनी डायरी में लिखे, उनके संपादित पाठ यहाँ दिये जा रहे हैं। -संपादक

मित्र और मकान

हमें मकान बनाने में रस है या मित्र बनाने में? एक पिता ने अपने दो पुत्रों को एक-एक लाख स्वर्ण-मुद्रायें दीं। एक बेटे ने एक लाख स्वर्ण-मुद्रायें खर्च करके दस मकान बनाये। दूसरे ने दस हजार स्वर्ण-मुद्रायें खर्च कर एक मकान बनाया और बाकी की नब्बे हजार स्वर्ण-मुद्रायें लाकर पिताजी को देते हुए बोला, ''पिताजी मैंने एक मकान बना लिया और बाकी का समय मित्र बनाने में व्यतीत किया।'' एक बेटे ने सभी स्वर्ण-मुद्रायें मकान बनाने में खर्च कर दीं। अब आप ही बताइये मकान बनाने में अधिक सुरक्षा है या मित्र बनाने में? आपकी श्रद्धा मकान में है या मित्रता में है?

घोड़े की सम्मति!

पाँच मित्र घोड़ा-गाड़ी में बैठकर किसी गाँव को जा रहे थे। एक प्रतिष्ठित आदमी उसी रास्ते से पैदल जा रहा था। घोड़ा-गाड़ी वाले ने उस आदमी को देखकर गाड़ी खड़ी कर दी और कहा कि आप इस गाड़ी में बैठ जाओ। गाड़ी में बैठे पाँचों में से किसी को कोई असुविधा नहीं है। सबकी सम्मति है, आप बैठ जाइये। उस प्रतिष्ठित व्यक्ति ने कहा, ''भाई! सबकी सम्मति तो है, पर घोड़े को पूछा क्या? उसकी सम्मति है क्या? आखिर बोझ तो उसको उठाना है।''

क्रूरता

संपत्तिशाली होकर क्रूर मत बनना। एक सेठ ने एक किसान को 3000 रुपये दिये किसान रुपये लौटा नहीं पाया। सेठ वसूली के लिए किसान के घर पर गया। दुष्काल पड़ा है, खेत में फसल आई नहीं। खाने के भी फाके पड़े है। गिड़गिड़ाते हुए किसान ने कहा, ''इस वर्ष मुझे माफ कर दो।'' सेठ ने कहा, ''हरामखोर! क्यों नाटक कर रहा है।'' अपने साथ आये आदमी को सेठ ने कहा, ''इसकी गाय के बछड़े को अपने घर पर ले लो। बदमाश ऐसे नहीं मानेगा।''

सेठ ने किसान की सुनी नहीं और बछड़े को घर पर लेकर आ गया। इधर बछड़े के वियोग में गाय रो-रो के चिल्ला रही थी। किसान गाय के दर्द को सहन नहीं कर पाया। वह गाय लेकर सेठ के घर पर गया और बोला, ''सेठ! गाय बछड़े के बिना चिल्ला रही है, लो यह गाय भी रख लो, मुझसे इसकी पीड़ा देखी नहीं जाती है।'' सेठ ने गाय भी रख ली। उसका दिल नहीं पसीजा।

सबको मन में निश्चय करना चाहिये कि यदि कभी शक्ति, सत्ता और संपत्ति आयेगी तो हम किसी को दु:खी नहीं करेंगे।

आपका क्या दोष ?

एक मुसलमान के घर में 15 साल बाद एक बच्चा हुआ। घर गरीब का। पड़ोस में एक सेठ रहता था। उसकी गाड़ी घर के सामने पार्किंग की जाती थी। एक दिन वो छोटा बच्चा गाड़ी के नीचे सोया हुआ था। सेठ को इसकी जानकारी नहीं थी और गाड़ी चला दी। बच्चा गाड़ी के नीचे कुचला गया और उसी समय उसने दम तोड़ दिया। सेठ हैरान हो गया। उस परिवार के पास गया, अपनी गलती मंजूर की और बच्चे के मुआवजे के रूप में एक तीन मंजिल मकान का प्रस्ताव किया। उस मुस्लिम परिवार ने मकान लेने से जब इनकार

कर दिया, तब सेठ ने पाँच लाख रुपये के नोट उसके घर पहुँचाये। उस परिवार ने रुपये वापस लौटाते हुए कहा, ''सेठ रुपये नहीं चाहिये। खुदा ने दिया उसी ने उठा लिया। आप तो बीच में आ गये। आपका क्या दोष है?''

दान

अगर दान देना ही है तो विलम्ब क्यों करना। नाई ने हजामत करते हुए बीच में उठकर भिखारी को दान दिया और हजामत करवाने वाले को बोला, ''भाई! मैं उसे हजामत होने तक ठहरा सकता था, परन्तु उतनी देर में वो दो-तीन जगह और जाकर कुछ पा सकेगा। अगर मैंने उसे रोक लिया होता तो उसको दान पाने से वंचित करने का पाप मुझे लगता।'' दान में विलम्ब करना दान को दूषित करना है। दान करना ही है तो विलम्ब क्यों करना।

रोगों का कारण

सुरेन्द्रनगर में अतुल नाम का व्यक्ति। लगभग 45 बरस की उम्र होगी। मधुमेह (डायबिटीज) का रोगी। हजारों इंजेक्शन ले चुका। लकवे (पेरेलिसिस) के अनेक अटैक आ चुके थे। अब उसने चार द्रव्य छोड़कर सबका त्याग कर दिया। आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत ले लिया। उसने अपनी माँ से पूछा, ''माँ इतने रोगों के दुःख मुझे क्यों सता रहे हैं?'' माँ ने कहा, ''बेटा! पिछले जनम में तुमने जीवदया का काम नहीं किया होगा। हिंसा की होगी। इस जनम में जो हुआ सो हुआ, आगे तो नहीं होगा।'' सुज्ञ माता के उत्तर ने बेटे को आश्वस्त किया।

आस्था और करुणा

एक व्यक्ति के घर पर उसके बेटे को 15 दिन से बुखार आ रहा था। परिवार वालों ने सभी प्रकार के इलाज करवाये परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। आखिर एक फकीर ने कहा कि तुम एक बकरे की बलि दो वरना

तुम्हारा बच्चा बचेगा नहीं। पड़ोस में एक दयालु सेठजी रहते थे। उन्होंने सारी घटना समझ कर उस परिवार के यहाँ जाकर कहा कि तुम तीन दिन बकरे की बलि मत दो। आपके बेटे का ईलाज मैं करूँगा। सेठ ने शंखेश्वर पार्श्वनाथ का ध्यान कर तेले-तप का पच्चक्खाण कर लिया। वो परिवार वाला बोला, ''अगर तीन दिन के भीतर कुछ हो गया तो इसका जवाबदार कौन?'' सेठ बोला, ''चिन्ता मत करो। भगवान सब ठीक करेगा। अगर इस बीच कुछ हो गया तो मेरा 18 बरस का बच्चा तुम्हारे घर पर पहुँचा दूँगा।'' तब कहीं उसने बकरे की बलि नहीं दी। एक दिन बाद बुखार काफी उतर गया और 2 दिन में लड़का बिलकुल ठीक हो गया। करुणा की भावना ने इस तरह एक बकरे की बलि रुकवा दी।

प्रतिकार

एक व्यक्ति ने एक दूसरे व्यक्ति के बारे में गाली-गलौज युक्त पत्रक निकाल कर गाँव में वितरण किया। उसकी बदनामी व निन्दा में कोई कसर नहीं रखी। पत्रक में उसने अपना नाम नहीं लिखा। समय के साथ जिस व्यक्ति ने यह पत्रक निकाला था, उसकी स्थिति विपरीत हो गई। दाने-दाने को वह मोहताज हो गया। जब उस व्यक्ति को यह पता लगा कि उसकी हालत दयनीय है और कोई सहायता करने वाला नहीं है, तब उसने एक व्यक्ति के साथ राशन-पानी और आर्थिक मदद भेजी और कहा कि जाओ उसके घर पर यह सब दे आओ। उसने कहा, भाई आपका नाम बताओ तो उसने अपना नाम बताने से मना कर दिया। दाता ने सोचा कि जब उसने पत्रक ही गुमनाम निकाला है, तो मैं अपना नाम क्यों उजागर करूँ। यह है समभाव की साधना व दान की उत्कृष्ट भावना। सामायिक में वेश के वफादार बनो। हृदय विशाल हो तो अपकार करने वाले का भी उपकार किया जा सकता है।

दान

घर में सबके हाथ से दान कराओ। खुद के हाथ से किया दान का फल खुद को ही मिलता है। परिवार में जो दान करेगा उसका फल उसको ही मिलेगा। छोटे से लेकर बड़े तक सबके हाथ से दान कराओ। छोटे-छोटे बच्चों में दान के संस्कार डालने के लिए उन्हें बचपन में ही दान की आदत डालनी चाहिये।

महायात्रा

स्कूल जाने से वो ही विद्यार्थी घबराता है जिसने गृह-कार्य (होम-वर्क) नहीं किया हो। आयकर अधिकारी से वो ही घबराता है, जिसके हिसाब-किताब और बहीखातों में गड़बड़ियाँ हों। मृत्यु से वो ही घबराता है, जिसके जीवन में पुण्य और धर्म की कमाई नहीं हो। यहाँ से मुंबई जाने के लिए भी कितनी तैयारी करनी पड़ती है। यात्रा का आरक्षण (रिज़र्वेशन) करवाना पड़ता है, बैग तैयार करना पड़ता है, यह और वह सामग्री साथ लेनी होती है। न जाने कितनी-कितनी तैयारी करनी पड़ती है। विचार कीजिये, फिर महायात्रा के लिए, अगले जन्म के लिए कितनी तैयारी करनी पड़ेगी।

मसखरी

एक व्यक्ति नारियल के पेड़ पर नारियल लेने गया। नारियल के पेड़ पर बहुत ऊँचाई पर नारियल लगते हैं। चढ़ने के पहले उसने भगवान से प्रार्थना की, ''प्रभो! मुझे वो शक्ति दो कि मैं आसानी से निर्विघ्न वृक्ष पर चढ़ जाऊँ। जो भी नारियल मिलेंगे, मैं उसके आधे आपके चरणों में चढ़ा दूंगा।'' वृक्ष की आधी ऊँचाई उसने सहज पार कर ली तो विचारों में परिवर्तन होना शुरू हो गया। बोला, ''मैंने आधे नारियल भगवान को चढ़ाने की प्रतिज्ञा की है। परन्तु प्रभो! आप तो खाने वाले हो नहीं, खायेगा तो पुजारी ही, फिर इतने नारियल आप क्या करेंगे?'' इस तरह सोचता हुआ वह 50 से

40, 30, 20 और 10 प्रतिशत पर आ गया और पेड़ पर चढ़ता गया। नारियल के नजदीक पहुँचने पर ज्यों ही उसने नारियल तोड़ने को हाथ बढ़ाया तो उसका दूसरा हाथ भी छूट गया और वो धमाक से नीचे गिर पड़ा। नीचे मिट्टी थी, पत्थर नहीं थे। इसलिये चोट तो नहीं आई, पर घबराते हुए बोला, ''प्रभो! आपने यह क्या किया? मैंने तो आपसे मसखरी की थी और आपने उसको सच मान लिया!''

रोने का कारण

एक युवक अपनी पत्नी को उसके पीहर भेजने के लिए स्टेशन पर गया। पति पत्नी में इतना प्रगाढ़ प्रेम था कि युवक पत्नी के वियोग को सहन करने में असमर्थ था। वह रोने लगा। दूसरी तरफ एक और युवक था वो भी रोता हुआ दिखाई दिया। दूसरे युवक ने पहले युवक को रोते देखकर पूछा, ''भाई, रो क्यों रहे हो?'' बोला, ''मैं पत्नी के बिना रह नहीं सकता, इसलिये रो रहा हूँ। गाड़ी आने ही वाली है, उसमें मेरी पत्नी जा रही है।'' उसी वक्त उसने दूसरे युवक से पूछा, ''भाई, यह तो बताओ तुम क्यों रो रहे हो?'' उसने रोते-रोते ही जवाब दिया, ''जिस ट्रेन से तुम्हारी पत्नी जा रही है, उसी ट्रेन से मेरी पत्नी आ रही है, इसलिये रो रहा हूँ।''

मददगार

एक गाँव में एक व्यक्ति रहता था, जिसका भगवान पर भरोसा था। एक दिन उस गाँव में बरसात ज्यादा हुई। परिणामस्वरूप वहाँ का बाँध टूट गया। सारा गाँव खाली करवाया गया। घोषणा करवाई कि गाँव में कोई नहीं रहे। बांध का पानी गाँव की तरफ बढ़ रहा है। सारा गाँव खाली हो गया, परन्तु उस व्यक्ति ने घर खाली नहीं किया। पानी गाँव में पहुँचने लगा। अधिकारी लोग जीप-गाड़ी लेकर उसके पास पहुँचे। कहने लगे, पानी नजदीक आ रहा है, तुम जीप में बैठो। उसने कहा, ''मैं नहीं चलूँगा, मेरी रक्षा भगवान करेगा।'' वह नहीं माना। पानी चढ़ने लगा। पहली मंजिल में पानी

भर गया। अधिकारी नाव लेकर उसके घर तक आये। बोले, ''भाई! पानी चढ़ रहा है, तुम्हारे लिये हम नाव लेकर आये हैं, तुम नाव में बैठो वरना डूब जाओगे।'' फिर भी वह व्यक्ति नहीं माना। 'मेरी रक्षा तो भगवान ही करेंगे' कहकर उनको भी लौटा दिया। पानी चढ़ता रहा, दो मंजिलें डूब गईं। वो व्यक्ति छत पर चढ़ गया। आखिर अधिकारी लोग हेलीकॉप्टर लेकर पहुँचे और बोले, ''भाई! अब तो चलो पूरा गाँव व तुम्हारा घर डूब रहा है।'' वह बोला, ''मैं नहीं चलूँगा, मेरी रक्षा तो भगवान ही करेगा।'' देखते-देखते पूरा घर पानी में डूब गया और वो व्यक्ति मर गया। मरने के बाद मृत्युलोक में भगवान के पास शिकायत करने लगा। ''प्रभो! मैंने आपके ऊपर पूरा भरोसा किया लेकिन आपने विश्वासघात किया।'' भगवान बोले, ''भले आदमी! पहले मैंने जीप भेजी, तुम नहीं माने। फिर मैंने नाव भेजी, तुम नहीं माने, आखिर में हेलीकॉप्टर भेजने वाला और कोई नहीं, मैं ही था, पर तुमने नहीं सुनी। उसका इलाज मेरे पास नहीं था।''

138. फरवरी-2004 में प्रदत्त एवं डायरी क्रमांक 28 व 30 में लिखित आचार्य विजयरत्नसुन्दरसूरिजी के प्रवचनांश

परमात्मा व पुण्य

हम किसके पीछे पागल हैं? हम पदार्थ के पीछे पागल है या हम पुण्य के पीछे पागल हैं या हम परमात्मा के पीछे पागल हैं? संसार अच्छा लगता है पुण्य से, शरीर अच्छा लगता है चमड़ी से। जिस प्रकार चाँद के बिना चांदणी नहीं आती, उसी प्रकार परमात्मा के बिना पुण्य नहीं आता।

जीवन के व्यवहार कैसे चलाते हो, बुद्धि से या श्रद्धा से? रात को सोते समय कभी मालूम होता है क्या कि सुबह क्या होगा? सुबह उठते ही गाड़ी, बंगला, संपत्ति, सब कुछ बराबर हैं तो जानते हो यह सब किसकी कृपा से हैं? रात को नींद आने पर आपकी चिन्ता कौन करता है? पुण्य और

परमात्मा की कृपा से सारी व्यवस्था होती है। जब आपकी नींद में भी परमात्मा देखभाल और चिन्ता करता है तो जागृत अवस्था में आप क्यों फिक्र करते हो। अतः जो आपकी चिन्ता करता है, आप उसकी चिन्ता करें। अगर पुण्य सलामत है तो सब कुछ कायम रहेगा।

जब पुण्य और परमात्मा आपकी इतनी रक्षा करते हैं तो आप उनके लिए कितना समय देते हो। सारा समय पदार्थ प्राप्ति में ही व्यतीत हो रहा है या परमात्म प्राप्ति में भी हो रहा है। जो कुछ सफलता मिलती है, उसके पीछे पुण्य और परमात्मा का आधार है।

ऊपर वाले का साथ!

माँ बच्चे का हाथ पकड़कर उसे पाटी पर लिखवाती है। अंगुलियाँ माँ पकड़ती है, हाथ माँ पकड़ती है, पेंसिल माँ घुमवाती है और बच्चे से 'अ-आ' लिखवाती है। काम सारा माँ करवाती है, नाम बच्चे का होता है। इसी प्रकार जो कुछ हो रहा है, परमात्मा की कृपा से हो रहा है। दुकान या दफ्तर संभालते हो, ठीक है; लेकिन ऊपर वाले को ज्यादा संभालो। ऊपर वाला साथ है तो कामकाज अच्छा चलेगा। संभालने वाला और सफलता देने वाला कोई और है। उत्तर-पुस्तिका में क्या लिखना, यह लड़के के हाथ में है; अंक देना परीक्षक के हाथ में है। ऊपरवाले को संभालने का आशय है नित्य आत्म-साधना, परमात्मा का सुमिरन और न्याय-मार्ग पर चलना।

अकथ खुशी

एक सज्जन आये। उनका चार बरस का बेटा काल कवलित हो गया। माँ के लिए असह्य दुःख था। माँ बहुत रोई। पति ने पत्नी से कहा, ''अपने भाग्य में संतान नहीं है। हमारा इकलौता बेटा मर गया। पास में छोटे बच्चों की पाठशाला है। क्या ही अच्छा हो कि स्कूल के 2000 बच्चों को हम अपना ही बेटा समझ लें।'' उस सज्जन ने बताया, ''महाराज दस साल

हो गये, उस दिन से उन बच्चों के लिए दूध अपने घर से जा रहा है, हम अकथ प्रसन्नता महसूस कर रहे हैं।''

क्षमा

जिसने हमको बहुत परेशान किया है, अगर आज वो ठीक हो गया है तो आप उसे माफ कर दीजिये। हमारी परेशानी का कारण हमारे कर्मों की शृंखला है। गजसुकुमाल के सिर पर धधकते अंगारे सोमिल ने रखे, यह निन्यानवें लाख भव पूर्व का वैर था। हजार गायों के बीच बछड़ा अपनी माँ को पहचान लेता है, उसी प्रकार कर्मसत्ता कर्ता को पहचान लेती है। अपकारी को यह सोचकर माफ करो कि यह मेरे कर्म का फल है।

जीवन परिवर्तन नहीं, अंतःकरण परिवर्तित होना चाहिये। गत दिवस किसी ने तुम्हारे साथ गलत व्यवहार किया है, आपका आज का व्यवहार उसके साथ कैसा होना चाहिये। खंदक मुनि ने अपने 500 शिष्यों को मोक्ष भेजा। कितनी क्षमा! खून के फव्वारे और हड्डियों की आवाज उनकी क्षमा भावना को विचलित नहीं कर सकी।

अगर अंतःकरण की क्षमा नहीं तो परलोक बिगड़ जायेगा। मेरा आने वाला जन्म नहीं बिगड़े इसके लिए क्षमाभाव जरूरी है। भाव बिगड़े तो परलोक बिगड़े। रोज के व्यवहार में धर्म झलकना चाहिये।

प्रभु का वचन याद करना ही न पड़े, क्षमा मेरा स्वभाव है, क्षमा मेरा धर्म है। जिंदगी में अगर कोई तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े भी कर दे, मार डाले, फाड़ डाले तो भी क्रोध नहीं करना, ऐसी क्षमा, धर्म-क्षमा कहलाती है।

संकेत

रास्ते पर चलते-चलते तीन प्रकार के बोर्ड मिलते हैं। पहले बोर्ड पर माल का विवरण; कौनसा माल, कहाँ मिलेगा। दूसरे बोर्ड पर यह रास्ता किधर जाता है, यह लिखा हुआ होता है। तीसरे बोर्ड पर यह लिखा हुआ

होता है कि कौनसा गाँव/नगर यहाँ से कितना दूर है। राही इन बोर्डो के लिखे अनुसार अपनी यात्रा में आगे बढ़ते हैं। प्रभु के बताये संकेतों को भी हमें समझना चाहिये।

सहनशीलता

एक राजा के पास एक नौकर था। राजा का उस नौकर पर इतना प्रेम था कि वो कोई भी चीज स्वयं खाने के पहले नौकर को खिलाता था। यह उसका रोज का क्रम था। एक दिन राजा जंगल में गया। साथ में नौकर था। कड़ाके की भूख लगी थी। एक व्यक्ति ने राजा को खाने के लिए एक बड़ा फल दिया। राजा ने उस फल का एक भाग काट कर नौकर को दिया। नौकर ने उसे खा लिया और राजा से दूसरा भाग देने का आग्रह किया। राजा ने उसे दूसरा भाग दिया वो भी वो खा गया। इसके पश्चात् नौकर ने उस फल का तीसरा भाग भी माँगा। नौकर तीसरा भाग भी खा गया। अब शेष बचा चौथा भाग जब राजा खाने लगा कि उसी वक्त नौकर ने अति आग्रह कर चौथा भाग भी लेकर स्वयं खा गया। राजा को इस पर बहुत आश्चर्य हुआ। साश्चर्य राजा ने नौकर से कहा, ''तुमको मालूम था कि मुझे बहुत जोर की भूख लगी है फिर भी तुमने मुझसे वह फल बार-बार कैसे माँगा।''

इस पर नौकर ने कहा, ''राजन्! वह फल इतना खारा व कटु था कि आप उसे नहीं खा सकते थे। आपने आज तक मुझे अच्छी-अच्छी वस्तुएँ सबसे पहले खाने को दी हैं, मैंने सोचा आज यह कटु फल आ गया तो क्या हुआ? मुझे सहर्ष इसे खा लेना चाहिये। आप इसे नहीं खा सकते थे, अतः आग्रहपूर्वक मैंने इस फल का स्वयं सेवन किया है।''

अगर कोई पारिवारिक जन या व्यक्ति हमें रोजाना अच्छी मीठी बातें सुनाता है। अगर किसी दिन गाली भी दे तो उसे प्रेम से सहन कर लेना चाहिये। इतनी सहनशीलता हर इन्सान को रखनी चाहिये।

सूझबूझ

पिता पुत्र खाना खाने बैठे। थाली में आई हुई कढ़ी स्वादिष्ट नहीं थी। न नमक का पता, न मसाले का नाम। बिल्कुल बेस्वाद थी। पुत्र आग बबूला हो गया। बोला, ऐसी कढ़ी किसने बनाई है। इतने में माँ आई और बोली, ''बेटा! रोजाना कढ़ी बहू बनाती है, आज मैंने बनाई है।'' माँ की सूझबूझ और विवेक बुद्धि से घर में शांति का वातावरण बन गया।

धन्यवाद-ज्ञापन

हमें जिससे प्यार है, उसकी गलती नहीं दिखाई देती। रिक्शा वाले को हम पैसे देते हैं, परंतु धन्यवाद के प्यारभरे शब्द उसे नहीं कहते। अगर वो रिक्शा सावधानी से नहीं चलाता, कदाचित् दुर्घटना हो जाती, तो हमें जान का खतरा रहता। अतः उसे अगर प्यार से दो मीठे शब्द भी कहें तो उसे अच्छा लगेगा।

दौड़

कुत्ता गाड़ी के पीछे दौड़ता है, दौड़ता है, परन्तु गाड़ी के पीछे ही रहता है; गाड़ी को पकड़ नहीं सकता। अगर कोशिश करते-करते कभी गाड़ी पकड़ भी ले तो कुत्ता कुत्ता ही रहता है, गाड़ी का मालिक नहीं बन सकता। उसी तरह आदमी दिन रात पदार्थों के पीछे दौड़ता रहता है, परन्तु पदार्थों के पीछे दौड़ने से वह परमात्मा तक पहुँच नहीं सकता।

संगत

लोहे की कील अगर पानी में डालो तो वह डूब जाती है, परन्तु वही कील लकड़ी के साथ जुड़ जाती है तो लकड़ी के साथ तिर जाती है। अगर पापी, साधु या सज्जन की संगति करले तो वह पार हो जाता है, अन्यथा उसका पतन निश्चित है।

नज़र

चील आकाश में उड़ती है। आसमान की उड़ान भरते-भरते अगर जमीन पर चूहा चल रहा हो तो उसकी नजर चूहे पर पड़ती है। मनुष्य जन्म का अनमोल अवसर परमात्मा बनने का है, फिर भी इन्सान पर-पदार्थों को प्राप्त करने में कीमती समय को बर्बाद कर रहा है।

संतोष

सभी अगर करोड़पति बनना चाहें तो नहीं बन सकते, परन्तु अगर संतोषी बनना चाहें तो अभी बन सकते हैं। सुखी होने के लिए संतोषी बनना जरूरी है, करोड़पति बनना जरूरी नहीं।

पतंग

चौदह जनवरी को मकर संक्रांति है। उस दिन लोग पतंग उड़ाते हैं। आसमान बहुत बड़ा है, हजारों लोग पतंग उड़ाते हैं। पतंग उड़ाने के बाद जब नीचे आते हैं, तब मित्र पूछते हैं कितनी पतंगें काटीं? सब एक दूसरे की पतंगें काटने में लगे हैं, जलगाँव वाला जलगाँव वाले की ही काटेगा, पूना वाले की नहीं। सब पड़ोसी को काटने में लगे हैं!

सुख और सम्पत्ति

अत्यधिक पैसा जीवन को लगभग दस चीजों के सुख से वंचित कर देता है-(1) शांति, (2) पत्नी,(3) पुत्र, (4) परिवार,(5) धर्म, (6) भगवान, (7), सद्भावना (8) गुरु (9) नींद, और (10) भोजन।

विवाह

पत्नी ने पति से कहा, ''चलो! अपन मार्केटिंग करने जाते हैं।''

पति बोला, ''मुझे समय नहीं है, ये लो एक लाख रुपये, जाओ और शोपिंग करो।''

दूसरे दिन पत्नी ने कहा, ''चलो! अपन गुरु महाराज के दर्शन करके आते हैं।''

पति बोला, ''मुझे कहाँ वक्त है, यह लो गाड़ी लेकर जाओ।''

तब हताश होकर पत्नी ने कहा, ''मैंने शादी रुपयों और गाड़ी के साथ नहीं की, आपके साथ की।''

संतुलन

गाड़ी चलाते समय अगर आगे वाला साइड न दे तो आदमी उग्र हो जाता है। गुस्से से चिल्लाने लग जाता है, धैर्य नष्ट हो जाता है। गुस्से में पाँव ब्रेक पर नहीं पड़ते। एक्सीलेटर पर जोर लगाता है, जिससे हादसे की संभावना रहती है। उस समय वह दो-पाँच मिनट के लिए प्रभु का नाम भी नहीं ले पाता है, क्योंकि पारा चढ़ा हुआ रहता है। महाराज बोले-''मैं पच्चीस साल से होर्न बजा रहा हूँ, प्रवचन दे रहा हूँ। आपने मेरी कितनी बात मानी, फिर भी मैं मेरा संतुलन बनाये हुए हूँ।''

तीन आँसू

तीन प्रकार के आँसू जिसकी आँखों में आते हैं, वह व्यक्ति सुखी बन सकता है। वे आँसू हैं-**(1) करुणा के आँसू** : दूसरों के दुःख को देखकर द्रवित हो जिसकी आँखों से आँसू आते हैं उसका जीवन सुखी है। दूसरे के दुःख में आनंद मनाने का पाप न करें। दूसरे के दुःख को देखकर जिसके मन में दया भाव आते हों वही धर्मी कहलाने योग्य है। दुनिया का कोई शख्स दुःखी न हो यह चाहे दुश्मन हो, भूमिका हमारी होनी चाहिये। 950 रुपये कमाने वाला 600 रुपये में अपना काम चलाकर बचे हुए 350 रुपये किसी दुःखी व्यक्ति को देने की भावना रखता है। **(2) कल्पांत के आँसू** : अपने पाप को यादकर आये हुए आँसू। क्या अपने पाप के कारण आप कभी रोये? अपने दुःख के कारण तो बहुत रोये। एक घटना है। मोरवी

का बाँध टूटने पर कई लोग डूबकर मर गये। वहाँ से एक व्यक्ति जो गहने लूटकर लाया था, वो ही उसने अपनी बहू को दिये। बाद में भुज में भूकम्प आया। भूकम्प में एक ही परिवार के 13 लोग दबकर मर गये। एक ही व्यक्ति बचा। जब राहतकर्मी दबे हुए लोगों को निकालने आये, तब वो 13 लोग मरे हुए निकले। एक बहिन के शरीर पर पहने वे गहने राहतकर्मियों ने निकालकर उस व्यक्ति को दिये तो उसने लेने से इन्कार कर दिया। बार-बार समझाने पर भी उसने गहने स्वीकार नहीं किये। तब राहतकर्मियों ने इसका कारण पूछा। रोते-रोते उसने जवाब दिया, इन गहनों को इन शवों के साथ जला दो। मोरवी के बांध टूटने के वक्त मैं वहाँ गया था। वहीं से मैं ये गहने लूट कर लाया और बहू को दिये। इस पाप ने मेरे पूरे परिवार का नाश कर दिया। नहीं चाहिये मुझे ये गहने। इतना कहकर वो फूट-फूट कर रोने लगा।

(3) कृतज्ञता के आँसू: किसी के उपकार, प्रभु की कृपा को यादकर कभी आँसू आये हैं। गुरुकृपा है कि सन्मार्ग मिला। प्रभुकृपा है कि मनुष्य जन्म मिला। उनके उपकारों को यादकर कभी आँखें सजल हुई हैं? अतः दुःखों को दूर करने के लिए करुणा के आँसू, कल्पांत के आँसू और कृतज्ञता के आँसू का विस्मरण मत करो।

पत्थर और पानी

पत्थर को अपने आकार के समान बरतन चाहिये, जबकि पानी अपना आकार बरतन के अनुरूप बना लेता है। हमें पत्थर की तरह नहीं, पानी की तरह बन जाना चाहिये। जिस परिस्थिति में हैं, उसमें समाधान व प्रसन्नता होनी चाहिये तभी सुखी बन सकते हैं।

धन और ज्ञान

हौद में पूरा पानी भर दो। निकालते-निकालते उसके खाली होने का डर रहता है। संसार के पदार्थ हौद के पानी की तरह हैं। उनका समाप्त होना निश्चित है, अतः शांति प्राप्त नहीं हो सकती। कुएँ का पानी कितना

भी निकालो, वह नीचे से आता ही रहेगा। हौद का पानी ऊपर से भरना पड़ता है। कुएँ का पानी का स्रोत अंतर का स्रोत है, उसके समाप्त होने की संभावना कम है। पर-पदार्थ सीमित हैं। कुएँ का पानी धर्म की तरह है, अनन्त है, अपार है, असीम है, नीचे से भरता ही रहता है। पैसा हौद का पानी है, जबकि ज्ञान कुएँ का पानी है।

मृत्यु के बाद शांति!

अंतिम यात्रा, उठावणा, श्रद्धांजलि, शोक सभा, प्रार्थना। जब किसी दिवंगत की याद में यह आयोजन होता है, तो सभा में ऐसा कहा जाता है कि 'स्वर्गस्थ आत्मा को प्रभु शांति प्रदान करे।' पूछा गया कि ऐसा क्यों कहा जाता है, तब उत्तर मिला कि इस व्यक्ति के पास गाड़ी, बंगला, परिवार, धन, सम्पत्ति एक दिन सब कुछ था, परन्तु जीवन में शांति नहीं थी। अतः भगवान से प्रार्थना की जाती है कि प्रभु उसे जीवन में सब कुछ मिला, लेकिन शांति नहीं मिली; अब मृत्यु के बाद उसे शांति जरूर मिले।

फैसला

एक पिता के 3 पुत्र थे। छोटा 25 बरस का, मझला 30 बरस का और बड़ा 35 बरस का। पिता के निधन के पश्चात् झगड़ा न हो, अतः उन्होंने अपनी संपत्ति का बँटवारा करने की इच्छा प्रकट की। दोनों पुत्रों ने कहा, ठीक है पिताजी! आप बँटवारा करें। परन्तु छोटे पुत्र ने कहा बँटवारा मैं करूंगा। इस पर वातावरण अशांत हो गया। आखिर हारकर पिताजी ने छोटे बेटे के हाथ से बँटवारा करवाना मंजूर किया। दोनों भाइयों ने सोचा, जो होगा सो होगा। पिता व दोनों पुत्रों ने कोरे कागज पर हस्ताक्षर कर छोटे बेटे को दे दिया। छोटे बेटे ने कहा पिताजी जो जितने बरस का है, उसे उतने लाख दे दीजिये। बड़े भाई 35 बरस के हैं, उन्हें 35 लाख दीजिये। मझले भैया को 30 लाख दीजिये। मैं 25 का हूँ, मुझे 25 लाख ही दीजिये। मैं सालभर से ही दुकान पर

बैठा हूँ। आज तक कॉलेज में पढ़ा हूँ। इसलिये मेरा हक इतना ही है। मुझे मालूम है, अगर आप बँटवारा करते तो एक सरीखा करते, जिसका मैं हकदार नहीं हूँ। दोनों भाई व पिता छोटे भाई का फैसला सुनकर स्तब्ध हो गये।

सामायिक

पूणिया श्रावक की सामायिक विशुद्ध सामायिक थी। एक दिन पूणिया की सामायिक में मन विचलित होने लगा। पूणिया ने चिन्तन किया, ऐसा क्यों हो रहा है। पत्नी से पूछने पर पता चला कि रसोई बनाने के लिए कण्डा दूसरी जगह से आ गया है। श्रावकजी बात सुनते ही बोल पड़े, ''महाराज! वहाँ तो पूणिया के यहाँ गोबर का कण्डा ही दूसरे का था, हमारे यहाँ तो सबकुछ दूसरे का है।''

नियम और जुर्माना

एक व्यक्ति महाराज साहब के पास गया। उसको महाराज साहब ने सामायिक के नियम करवाये। जिस दिन वो सामायिक न करे, उस दिन 100 रुपये का अर्थदण्ड। इस तरह वर्ष में 250 गैर हाजिरी हुई। जब महाराज साहब के पास गया, तब हिसाब देते हुए कहा, महाराज साहब 25,000 रुपये जुर्माना लगा। आगे के लिए एक दिन सामायिक नहीं होने पर 1,000 रुपये के जुर्माने के नियम करा दो। साल भर बाद हिसाब दिया तो बोला कि 25 दिन सामायिक नहीं हुई और 25,000 रुपये अर्थदण्ड लगा। अब उसने कहा, आगे के लिए 10,000 रुपये की शास्ति (अर्थदण्ड)। अब तीसरे साल केवल 2 सामायिक नहीं हुई और 20,000 की शास्ति लगी। ऐसा करते-करते उसकी सामायिक नियमित होने लगी और रस आने लगा। अब वह प्रतिदिन सुबह सर्वप्रथम सामायिक करता है।

मालिक

जापान में भूकम्प आने के बाद सैनिकों ने एक व्यक्ति के कहने से गिरे हुए मकान में से हीरे की पेटी निकाली और उसके पश्चात् उसकी पुत्र की

लाश निकाली। मालिक मर जाता है और माल बच जाता है, यही संसार है। तुम जिसे छोड़ सको, उसके मालिक हो और जिसको छोड़ नहीं सको, उसके गुलाम।

स्वीकारोक्ति

कुछ मजदूरों को बस वाला बीच में ही उतार देता था। श्रमिकों के पास इतना किराया नहीं था। तब एक उदार व्यक्ति ने कहा कि श्रमिक जितना किराया दे, उनसे ले लेना, बाकी मुझसे महीने के आखिर में ले लेना। महीने के अन्त में कण्डक्टर कम वसूल हुआ किराया उस उदार व्यक्ति से ले लेता था। उसके मित्र ने कहा, ''रे भाई! बस कंडक्टर का क्या भरोसा। वो तुमसे झूठ-मूठ भी ज्यादा ले लेता होगा।'' तब उस व्यक्ति ने कहा, ''रे भाई! अपन कौनसे दूध के धुले हैं। यह सारा धन क्या ईमानदारी से प्राप्त हुआ है?''

अटल निश्चय

बड़ौदा में महाराज के 30 प्रवचन हुए। एक युवक प्रवचनों से बहुत प्रभावित हुआ और महाराज के पास आया बोला, ''महाराज! मुझे सिगरेट छोड़नी है।''

साधुजी ने पूछा, ''रोज की कितनी सिगरेट पीते हो।''

बोला, ''रोज की 70 पीता हूँ।''

महाराज बोले, ''पूरी छोड़ना संभव नहीं होगा, तुम प्रति सप्ताह 7-7 छोड़ते रहो। धीरे-धीरे सब छूट जायेगी।''

युवक बोला, ''महाराज! मुझे एक साथ सब छोड़नी है, अब मैं अपना निश्चय कर चूका हूँ।'' महाराज ने उसे सिगरेट के पूर्ण त्याग करवा दिये। महाराज का वहाँ से विहार हो गया। कुछ दिनों बाद वह युवक महाराज के दर्शन करने गया। उसका चेहरा पूरा बदल गया था। सिर, ललाट लहूलुहान

हो चुके थे। पहिचान में आना भी मुश्किल था। महाराज के पास गया और पूछा–''आपने मुझे पहचाना।''

महाराज उसके चेहरे में हुए परिवर्तन से उसे नहीं पहचान सके। तब उसने कहा, ''महाराज! मैं वही 70 सिगरेट पीने वाला युवक हूँ। बिना सिगरेट के दो रातों से सिर फोड़–फोड़ कर रात निकाली है, क्या बताऊँ। डॉक्टर से इलाज करवा रहा हूँ।''

महाराज बोले, ''भाई! मैंने तुमको कहा था, धीरे–धीरे छोड़ो।''

तब युवक बोला, ''महाराजजी! एक बात मैं आपसे पूछना चाहता हूँ, क्या आप धीरे–धीरे गृहस्थ जीवन छोड़कर साधु बने या एकदम?'' महाराज निरुत्तर हो गये। वह युवक इतनी सिगरेट पीता था कि साधुजी के 30 व्याख्यान कोने में बैठकर सिगरेट पीते–पीते सुने थे। उसने सदा के लिए सिगरेट छोड़ दी।

सामायिक

आपको एक मकान किराये पर चाहिये, लीज पर चाहिये। अगर मकान मालिक वह मकान आपको स्वामित्व (ओनरशिप) पर दे दे तो आप कितने प्रसन्न होंगे। आपने माँगा भाड़े से और उसने आपको मालिक बना दिया। आपने मुनिराज से एक सामायिक के प्रत्याख्यान माँगे। मुनिराज ने कहा, ''अगर मैं आपको जीवनभर की सामायिक दिला दूँ तो आपको कैसा लगेगा?'' आपने माँगी एक सामायिक और उन्होंने आपको जीवनभर की सामायिक का प्रस्ताव दे दिया, क्या आपको स्वीकार है?

समता की परीक्षा

एक भाई की विवाह की रजत जयन्ती थी। लोगों को भोजन के लिए बुलाया गया। बड़ा आयोजन था, सब भोजन के लिए बैठे। लोगों के आग्रह पर वह भाई भी पंगत में थाली लगाकर बैठ गया। परोसने वालों ने सबको

मिठाई, सब्जी, पूरी आदि परोसे। एक परोसने वाले ने बीच में बैठे भाई की थाली में पत्थर रख दिया। भाई बहुत नाराज हुआ। इतनी बेइज्जती! एक सज्जन ने समझाया, इसमें नाराज होने की क्या बात है, आपकी सिल्वर जुबली है। जितने भी मेहमान आये हैं, आप सबको अपने हाथ से मिठाई परोसकर खिलाओ, इसीलिये आपकी थाली को इन्होंने छोड़ा है। इस तरह यह आपके समताभाव की परीक्षा है।

सामूहिकता

महाराज ने फरमाया घर-घर में अलग-अलग सामायिक की अपेक्षा आपको स्थानक, उपाश्रय में मिलकर एक साथ समूह में सामायिक करनी चाहिये। श्रावकों ने वैसा ही किया। तब महाराज ने कहा, ''मैं आपको इतनी बड़ी संख्या में एक साथ सामायिक के वेश में देखकर बहुत प्रसन्न हूँ। आज तक विवाह, क्रिकेट मैच, चुनावी सभा आदि में इतनी बड़ी भीड़ तो देखी है, परन्तु सामायिक में इतने बड़े जन समुदाय को पहली बार देखा है।''

आयम्बिल का प्रताप

कच्छ में जब भूकम्प आया तो हजारों लोग दबकर मर गये। पालड़ी गाँव में 250 घर जैनियों के हैं उनका एक घर सही सलामत नहीं रहा। सब मकान गिर गये परन्तु एक भी जैनी उसमें नहीं मरा। उनसे जब पूछा कि ऐसा कैसे हुआ तब एक भाई बताया, ''महाराज साहब! 25 जनवरी के दिन पूरे जैन समाज में आयंबिल का तप था। साधुजी ने कहा था कि पारणा सामूहिक होगा। कोई भी घर पर पारणा न करे। इसलिये 26 जनवरी की सुबह सभी लोग सपरिवार उपाश्रय के नजदीक खुले में पारणे के लिए आ गये थे। उसी समय भूकम्प आया, सभी बच गये क्योंकि घर पर कोई नहीं था। आयंबिल के प्रताप से सभी सही सलामत रह गये।

परमात्मा

प्रभु से माँगना है तो पावर हाउस माँगो, लट्टू (बल्ब) नहीं। प्रभु को छोड़कर पदार्थों को माँगने वाला बल्ब ही माँगता है। परमात्मा मिलने पर ऐश्वर्य मिल ही जाता है। ऐश्वर्य बल्ब है, परमात्मा पावर हाउस है। अब आपको ऐश्वर्य पसंद है या ईश्वर? करोड़ मिले या न मिले, परमात्मा से मिलने का प्रयत्न करो।

वसुधैव कुटुंबकम्

साधु बननेवाला कुटुम्ब को छोड़ता नहीं है, अपितु वह सारे विश्व के प्राणियों को कुटुम्ब मानता है। छह काय के जीवों की रक्षा करता है। सारे संसार का वह कल्याण चाहता है। गृहस्थ अपने परिवार का भला चाहता है, साधु पूरे विश्व के प्राणियों का भला चाहता है।

सत्कार्यों का सत्कार

पुण्य का कोई काम सामने आ जाय तो उसका सत्कार करो, अच्छे कार्य का सत्कार करो। उस अवसर को हाथ से मत जाने दो। वैज्ञानिक कहते हैं मंगल पर जीवन की तलाश की जा रही है। मैं कहता हूँ जीवन में मंगल लाने का प्रयत्न करो। मंगलमय मौत के लिए पुण्य के कार्यों को मत गमाओ। कभी-कभी यह सुनकर दुःख होता है जब स्कूल में पढ़ने वाले अपने बेटे को माँ टिफिन साथ में देती है और कहती है, बेटा अकेले खाना, किसी को खिलाना मत। ऐसी सीख पाने वाला उस माँ का बेटा कैसा निकलेगा।

गोशाला में रोजाना 2 लाख

राजस्थान की एक गोशाला में 40000 पशु थे। सभी न्यासियों ने 10-10 लाख रुपये दिये। सरकारी अनुदान भी मिला। भीषण दुष्काल में

सारा कोष समाप्त हो गया। ऐसे में एक बहन के यहाँ से उसका मुनीम आया। उसने गोशाला में 2 लाख रुपये दिये और चल दिया। दूसरे दिन फिर वही मुनीम आया, फिर दो लाख रुपये दिये। तीसरे दिन फिर वही मुनीम आया, फिर दो लाख रुपये दिये। न्यासियों ने पूछा–''भाई! तुम रोजाना 2–2 लाख रुपये देकर जाते हो, यह रकम कौन भेज रहा है?''

मुनीमजी ने बताने से इनकार कर दिया। क्योंकि बहन का यही आदेश था। न्यासी बोले–''भाई! हमें उस बहन के दर्शन तो कराना, जो इतनी बड़ी सहायता रोजाना पहुँचा रही है।'' मुनीम रोजाना 2 लाख रुपये वहाँ ला रहा था। देने वाले का नाम पता आग्रह करने पर भी नहीं बताया। भयंकर दुष्काल की परिस्थिति में निरन्तर यह सहायता कहाँ से आ रही थी, किसी को इसका अता–पता नहीं चला। जब अति आग्रह किया गया तो मुनीम ने कहा, ''जिस दिन इसकी जानकारी हो जायेगी कि सहायता कहाँ से आ रही है, उस दिन 2 लाख रुपये आना बंद हो जायेगा।'' तब कहीं न्यासियों को अपना आग्रह छोड़ना पड़ा। दुष्काल के नौ महीनों तक निरन्तर दान की यह गंगा बहती रही। 5 करोड़ 40 लाख रुपये की कुल राशि का दान गुप्तदान! नाम व यश का पता नहीं। ऊपर से यह सूचना कि न्यासियों को धन्यवाद देना जो मेरा अगला जन्म सुधारने का मौका दिया।

बालमुनि

मुनिराज के पास एक श्रावकजी पहुँचे। छोटे महाराज को देखकर श्रावकजी ने पूछा–''ये छोटे मुनि कितने बरस के हैं?''

मुनिराज ने कहा–''बारह बरस के हैं।'' यह सुनते ही श्रावकजी रोने लगे। मुनिराज ने कहा, ''रोने की क्या बात है?''

श्रावकजी बोले–''महाराज साहब! बारह बरस की छोटी उम्र में इनको भगवान याद आ गये, मैं 72 बरस का हो गया हूँ, मुझे भगवान याद नहीं आ रहा है!''

रिक्शावाला

विजय भाई ठक्कर सन्त दर्शन के लिए आये। थोड़ी ही देर बाद एक व्यक्ति और आया। सामने खड़ा देखकर मैंने विजय भाई से पूछा, ''यह कौन है ?''

बोले, ''रिक्शा वाला है। मुझे यहाँ तक पहुँचाने आया। उसने किराये के पच्चीस रूपये माँगे, मैंने सौ की नोट दी, उसने पिचहत्तर वापस दिये। मैंने वो पिचहत्तर रुपये उसे प्रेमपूर्वक वापस लौटा दिये।''

रिक्शा वाला बोला, ''मुझे आज तक इतनी बड़ी टिप किसी ने नहीं दी। कृपया बताइये आपने पिचहत्तर रुपये क्यों दिये ?''

इस पर विजय भाई ने रिक्शावाले से कहा, ''अगर तुम मुझे ऑफिस में, शादी में या और कहीं पहुँचा देते तो मैं 75 रुपये नहीं देता। परन्तु तुमने मुझे जीवन का कल्याण करने वाले मेरे गुरु के पास पहुँचाया है, इसलिये मैंने 75 रुपये तुम्हें दिये हैं।''

रिक्शा वाला बोला, ''तुम्हारे गुरु इतने अच्छे हैं तो मैं भी उनके दर्शन करूँगा।''

इस संवाद पर मुनिराज बोले, ''मैं देखता हूँ लोग मेरे दर्शन को आते हैं, दो हजार रुपये खर्च करके आते हैं। मैं जब ऊपर से नीचे देखता हूँ तो वे 10-15 रुपये के लिए रिक्शा वाले से झगड़ा करते नजर आते हैं।''

बूट पॉलिश

विजय भाई बोले, ''स्टेशन से आते समय 12-15 बरस के दो भाइयों को मैंने बूट पॉलिश करते देखा। उनकी गिरती हालत देखकर मैंने सोचा मैं इनकी कुछ मदद करूँ।''

मैंने कहा, ''बूट पॉलिश तो नहीं, पर मेरे जूतों पर फड़का मार दो।''

उनके फड़के से साफ करने पर मैंने 20 रुपये उनको दिये और पूछा, ''तुम्हें क्या जरूरत है?''

''एक पेटी मिल जाय तो यह सब सामान रखने की सुविधा हो जाय।''

''पेटी कितने में आती है?''

''दो सौ रुपये में।'' मैंने उन्हें 200 रुपये दिये।

उन्होंने पूछा, ''आपका नाम-पता?''

''नाम-पते की क्या जरूरत है?''

वे बोले, ''जब कभी बूट पॉलिश करते-करते दो सौ रुपये इकट्ठे हो जायेंगे, तब हम ये रुपये लौटाना चाहेंगे।'' यह थी उन गरीब भाइयों की प्रामाणिक भावना।

ऐरन व हथौड़ा

ऐरन पर रखकर हथौड़े से पीटा जाता है। ऐरन भी लोहे की है, हथोड़ा भी लोहे का है। पीटते-पीटते जितने हथौड़े बदलने पड़े, ऐरन उतनी नहीं बदलनी पड़ी। जो मारता है, उसे ही बार-बार बदलना पड़ता है। मारने वाला ही बार-बार मरता है। मार खाने वाला बार-बार नहीं मरता।

करोड़पति

करोड़पति वकील को एक आदमी ने मरते-मरते बचाया। वकील को जीवनदान मिला। वकील ने प्रसन्न होकर उस आदमी को दस रुपये दिये। उस आदमी के मित्र ने उसे कहा-''तूने इसकी जान बचाई, इसने केवल दस रुपये ही दिये।''

उस आदमी ने कहा-''उस वकील की इतनी ही कीमत थी।''

गुप्त पुण्य

एक डूबने वाले करोड़पति को एक आदमी ने बचाया। उसने कहा, ''तुमने मुझे बचाया है, इसके बदले में क्या दूँ।''

उसने कहा, ''किसी से यह बात मत कहना, यही चाहता हूँ।''

धर्म का वक्त

खेलने का समय होता है। पढ़ने का समय होता है। कमाने का समय होता है। शादी का समय होता है। आराम का समय होता है। परन्तु धर्म के लिए सारा समय उपयुक्त है। एक बच्चा दस साल की उम्र में दीक्षा ले रहा था। एक सत्तर साल का व्यक्ति आया और बोला, ''बालदीक्षा नहीं होनी चाहिये।''

साधुजी बोले, ''अच्छा है, आप दीक्षा ले लीजिये।''

धर्म को समय के साथ नहीं जोड़ना चाहिये, क्योंकि मौत कब आ जाय, इसका क्या पता?

अनाथीमुनि

एक अंगुली दूसरी अंगुली का रोग नहीं ले सकती। एक के रोग में दूसरा रो सकता है, मगर कोई दूसरे का रोग ले नहीं सकता। अनाथीमुनि ने राजा श्रेणिक से कहा–''राजन्! संसार का वैभव, धन, धान्य, परिवार, पत्नी सभी मेरे दर्द व रोग की पीड़ा को देखकर रो रहे थे, परन्तु मेरे रोग को कोई मिटा नहीं सका। मैं इसीलिये अनाथ हूँ।''

समय की गाड़ी में न ब्रेक है, न रिवर्स गियर। रोग, जरा और मौत तीनों दुःख इन्सान के पीछे पड़े हैं, फिर भी वह सोया पड़ा है। इन तीन दुःखों से बचने के लिए आपके पास क्या उपाय है?

अपरिग्रह

स्टेशन पर गाड़ी आने के बाद वो ही मुसाफिर जल्दी उतर सकता है, जिसके पास लगेज नहीं होगा या थोड़ा होगा। जिस व्यक्ति का पसारा अधिक होगा, फैक्ट्रियाँ, गाड़ियाँ, कोठियाँ, शोरूम आदि जिसके पास अधिक होंगे, उसको मृत्यु की पीड़ा अधिक होगी।

संस्कार

बच्चे ने घर से अच्छा शर्ट लिया और एक भिखारी को दिया, जिसका शर्ट तार-तार हो चुका था। बच्चे ने जब शर्ट दिया, तब भिखारी ने कहा, एक और भिखारी उधर बैठा है, जिसके पास पहनने को बनियान भी नहीं है। तब उस बच्चे ने अपना पहना हुआ बनियान भी उसको दे दिया। ये संस्कार बच्चे में कैसे आये। माँ ने बेटे को जो बचपन में संस्कार दिये थे, तभी बच्चा इतना उदार बना।

एक दिन बच्चे ने भूखे व्यक्ति को देख कर अपनी थाली में आई हुई गरम रोटी उस भूखे व्यक्ति को दे दी। माँ ने पूछा-''बेटा! तुम्हारी रोटी किधर गई?''

बेटा बोला-''उस भूखे व्यक्ति को मैंने वह रोटी दी।''

तब माँ बोली-''अरे बेटा! रोटी के साथ थोड़ी सब्जी भी दे देनी थी, बिचारा आराम से खाता।''

मातृत्व

एक दम्पती चिकित्सक के पास गया। पत्नी गर्भवती थी। चिकित्सक ने सोनोग्राफी की। उसने देखा, गर्भस्थ शिशु बिल्कुल विद्रूप है। चिकित्सक ने दम्पति को सुझाव दिया, ''गर्भ में शिशु बेडौल है, विकृत स्वरूप है। इसलिए इसका गर्भपात करवा दिया जाना चाहिये।''

पत्नी ने कहा–''बच्चा जैसा है, मेरा है। मुझे गर्भपात नहीं करवाना।'' उस माँ ने गर्भपात नहीं कराया। लड़का बिल्कुल विकृत हुआ। वह तेरह महीनों तक जीवित रहा। माता–पिता ने उसे सभी तीर्थों पर घुमाकर दर्शन कराये।

सद्भावना

रमणभाई स्वधर्मी वात्सल्य के लिए भोजनशाला चलाते थे। सैकड़ों धर्मबन्धु वहाँ भोजन का लाभ लेते थे। एक दिन एक व्यक्ति रमणभाई से मिला और बोला–''आप रसोड़ा चलाते हो। रसोइया रोटी में घी बराबर नहीं डालता है। इससे आपका नाम खराब होता है।''

रमणभाई एक दिन अचानक रसोड़े में पहुँचे और अपने गले की चैन रसोइये के गले में डाल दी। बोले–''बच्चे का जन्मदिन था। सबको उपहार दिया। तुम नहीं आ सके। इसलिये यह उपहार मैं लेकर आ गया। तुम्हारा वेतन तो अभी जो है, वही रहेगा। लेकिन रसोड़े में जितने घी के डिब्बे खर्च होंगे। प्रत्येक डिब्बे के पीछे तुम्हे 500 रुपये अतिरिक्त मिलेंगे।'' रसोइये की आँखों में पानी आ गया और हृदय में परिवर्तन आ गया।

टटोलें अपना मन

एक बार आप पिक्चर देखने गये। टिकट नहीं मिला। दुगुने पैसे देकर ब्लैक में भी टिकट नहीं मिला। आप घर लौट आये। आपके 500 रुपये बच गये। इसकी खुशी होगी या टिकट न मिलने का दुःख?

एक जगह आपको 10,000 का दान देना था। मौका नहीं मिला। दस हजार रुपये बच गये। इस रकम के बचने का आपको सुख होगा या दुःख? क्या दान नहीं दे पाने का दुःख हुआ?

फर्श मत बदलना

कमलभाई के घर पर साधु-संत आते रहते थे। उन्होंने अपने पुत्र को एक बात कही कि बेटा, तुम घर का फर्निचर बदला रहे हो, सीलिंग भी चेंज कर रहे हो। और भी कुछ बदलना-बदलवाना हो तो भले ही बदलते रहना, परन्तु इस घर के फर्श के टाइल मत बदलवाना क्योंकि इन टाइलों पर कितने ही संत-महात्माओं के चरण-कमल पड़े हैं और ये पवित्र हुए हैं।

139. मृत्यु-चिन्तन

मृत्यु के बारे में यहाँ बिन्दुवार विचार संगृहीत हैं। डायरियों से प्राप्त सूचनाओं तथा अन्य जानकारी के अनुसार इनमें काफी बिन्दु ओजस्वी वक्ता मुनि तरुणसागरजी के प्रवचनांश हैं। कुछ विचार संग्राहक के तो कुछ अज्ञातजनों के भी हैं।

- रोज न सही, पर कभी-कभी मरघट जरूर जाओ और वहाँ जलती हुई चिताओं को देखो। वहाँ ज्यों-ज्यों चिता जलेगी तुम्हारी चेतना भी जगती चली जायेगी। दरअसल किसी की जलती हुई चिता तुम्हारे लिए एक चेतावनी है कि आज नहीं तो कल तुम्हारा भी यही हाल होने वाला है। समझ हो तो किसी की भी अर्थी जीवन का अर्थ दे सकती है और समझ न हो तो तरुणसागर जैसे मुनि भी कुछ नहीं कर सकते। जो अर्थी को देखकर जीवन का अर्थ नहीं समझ सकता वह डोली को देखकर जीवन का क्या अर्थ समझेगा।
- तुम्हारे पास-पड़ोस में किसी की मृत्यु हो जाये तो तुम कहते हो, बेचारा चला गया। तुम इस लहजे में कहते हो कि 'बेचारा चला गया', जैसे कि तुम अमर हो या तुम कभी नहीं मरोगे! पर ध्यान रखना, जब तुम कहते हो कि 'बेचारा चल बसा', तो आकाश में खड़ी मौत ठहाका लगाती है और कहती है कि, ''ठीक है बच्चू! तू

अपने को अमर समझ रहा है ना, तो अब तेरा ही नंबर है!'' दुनिया का हर आदमी कतार में ही लगा है। श्मशान घाट पर मुर्दों का तांता लगा है। सुबह-शाम आठों याम मृत्यु जारी है।

- किसी की सड़क से गुजरती अर्थी को देखकर यह मत कहना कि 'बेचारा' चल बसा, अपितु उस अर्थी को देखकर सोचना कि किसी दिन मेरी अर्थी भी इन्हीं रास्तों से यों ही गुजर जायेगी और लोग सड़क के दोनों ओर खड़े होकर देखते रह जायेंगे। उस अर्थी से अपनी मृत्यु का बोध ले लेना, क्योंकि दूसरे की मौत तुम्हारे लिये एक चुनौती है।

- अनेक लोग मंदिर में परिक्रमा लगाते हैं, अच्छी बात है। लेकिन इसके साथ ही एक काम और करना। पूरे दिन में किसी मरघट की परिक्रमा जरूर लगाना। मरघट की परिक्रमा जीवन में वह क्रांति खड़ी करेगी, जो अब तक मंदिरों की हजारों परिक्रमायें भी नहीं कर पाईं। वैराग्य के लिए मरघट से बढ़कर कोई उत्तम स्थान नहीं है। श्मशान में वैराग्य और भक्ति का वास है। जिस शरीर के लिए आदमी जिंदगी में न जाने कितने पाप करता है, उस शरीर की हैसियत मुट्ठी भर राख से ज्यादा नहीं है। इसका बोध श्मशान में ही मिलता है। इसलिए यह सत्य श्मशान में ही समझ में आता है। अतः पूरे दिन में श्मशान की एक परिक्रमा जरूर लगाओ।

- जब तुम श्मशान में जलती हुई लाशों को अधजले मुर्दों को देखोगे तो तुम्हें यह बोध मिलेगा कि पागल! कहाँ भागता है। एक दिन तेरी भी यही गत होने वाली है। इसीलिये कहता हूँ कि श्मशान गाँव के बाहर नहीं, अपितु शहर के बीच चौराहे पर होना चाहिये। ताकि आदमी जब उस चौराहे से गुजरें, तो वहाँ मृत्यु का मुख्यालय देखकर

अपनी मृत्यु का ख्याल करता रहे। दुनिया में अगर पापों से बचना है तो मृत्यु को सामने रखकर जीना। दुनिया से अपने पाप छिपा सकते हो, लेकिन मन से छिपा पाना संभव नहीं, क्योंकि मन सहस्राक्षी है। मन की हजारों आँखें हैं। खुद और खुदा से कुछ भी गोपनीय नहीं। मृत्यु का बोध अपराधों से मुक्ति का अमोघ उपाय है।

- आदमी के पास जीवन हर पल नहीं होता, पर मृत्यु हर पल होती है। यह नहीं सोचना चाहिये कि आदमी 50 साल के बाद मरता है या 70 साल के बाद मरता है या 100 साल के बाद मरता है या जवानी में मरता है या बूढ़ा होने के बाद मरता है। ऐसा सोचना ही मत, क्योंकि आदमी तो हर पल मर रहा है। हर साँस जीवन है तो हर उच्छ्वास मृत्यु है। आदमी जन्म लेने के साथ ही मरना शुरू कर देता है। पूरी तरह से जन्म ले ही नहीं पाता और मृत्यु उसका पीछा करना शुरू कर देती है। इसलिये कहता हूँ कि मनुष्य के पास जिंदगी है कहाँ? और जो जिंदगी है भी तो उस पर हर पल मृत्यु का पहरा है।

- ध्यान रखना, आदमी के मरने के बाद उसे श्मशान तक पहुँचाने के लिए तो उसके साथ सारी दुनिया हो लेगी, लेकिन श्मशान के आगे साथ जाने वाला पूरे जहाँ में एक भी नहीं होगा। मरघट के आगे मनुष्य के साथ उसके अच्छे-बुरे कर्म ही जाते हैं। मृत्यु के बाद तो एक धर्म ही साथी है, जो मनुष्य का साथ देता है और उसे सहारा देता है।

- यदि तुम्हें यह मालूम हो जाय कि आज तुम्हारी जिंदगी का आखिरी दिन है तो उस दिन तुम क्या करोगे? क्या उस दिन तुम किसी को गाली दे सकोगे? क्या उस दिन तुम किसी के साथ छल-कपट, धोखाधड़ी कर सकोगे? क्या उस दिन तुम शराब पी सकोगे, मांसाहार

कर सकोगे ? क्या उस दिन तुम किसी के साथ दुर्व्यवहार, किसी की हत्या कर सकोगे ? क्या उस दिन तुम क्रोध कर सकोगे ? क्या उस दिन तुम चंद चमकते-दमकते कलदारों के लिए अपने धर्म, ईमान और न्याय को छोड़ सकोगे ? नहीं, यह कतई संभव नहीं है। यदि तुम्हे यह मालूम पड़ जाये कि आज जिंदगी का आखिरी दिन है तो उस दिन तुम कोई पाप नहीं कर सकते। कोई अपराध और खोटा कर्म नहीं कर सकते, क्योंकि तुम्हें मालूम पड़ गया है कि यह तुम्हारा अंतिम, आखिरी दिन है। उस दिन तुम्हारी कोशिश होगी कि अब तक जो पाप हुए हैं, उनका प्रायश्चित कर लूँ। जिनसे वैर-विरोध है, उनसे क्षमायाचना कर लूँ। जिनको ठेस पहुँचाई है, उनको माफीनामा दे दूँ। अब आखिरी दिन परमात्मा को धन्यवाद दे दूँ। उनका पावन स्मरण कर लूँ। अधिक से अधिक दान पुण्य कर लूँ। मृत्यु का स्मरण आते ही धर्म का मूल्य बढ़ जाता है और पाप, कामना, वासना की ओर भागता हुआ शैतान मन थम जाता है।

□ इस मुल्क में इतने अपराध, हत्यायें, लूट, खसोट, चोरी, डकैती, बलात्कार, हिंसा, खून-खराबे हो रहे हैं; क्योंकि आदमी भूल गया है कि कल उसको मर जाना है। याद रखना, जब आदमी अपनी मृत्यु को भूल जाता है तो वह पाप और आपराधिक गतिविधियों में लिप्त हो जाता है और इस तरह पृथ्वी पर पाप बढ़ने लगते हैं।

□ ''अरहंत नाम सत्य है, राम नाम सत्य है'' यह शाश्वत सत्य मुर्दों को सुनाया जाता है! मरने के बाद जब वह सुन नहीं सकता, तब लोग दुहराते हैं कि राम नाम सत्य है, अरहंत नाम सत्य है। काश, आदमी जीते जी इस सच्चाई को स्वीकार कर ले तो मनुष्य का जीवन तीर्थ बन जाये। मनुष्य का जीवन गीत बन जाय, गीता बन जाय, गंगा बन जाय।

- मृत्यु है क्या ? मृत्यु परमात्मा के दरबार से आने वाली आयकर की तारीख है। प्रभु के घट पर जीवन का हिसाब देने का दिन है। अगर हिसाब में घोटाला होगा तो मृत्यु से घबराहट तो होगी ही। पता है, मृत्यु से कौन घबराता है? वही घबराता है जिसके जीवन का हिसाब गड़बड़ होता है। आयकर अफसर से वही घबराता है जिसके बहीखाते गलत होते हैं। जीवन के बहीखाते सही हों तो मृत्यु के वक्त घबराहट की गुंजाइश ही नहीं। जिसने मृत्यु की तैयारी जिंदगी में ही कर ली, उसके लिए मृत्यु कभी अशुभ नहीं हो सकती।

- दूसरे की मृत्यु से अपनी मृत्यु का बोध ले लेना, क्योंकि हर पीले पत्ते का टूटना तुम्हारी मौत है, अगर तुम समझो तो। हर पानी के बुलबुले का फूटना तुम्हारी मौत है, अगर तुम समझो तो। हर सूर्य का ढलना तुम्हारी मौत है अगर तुम समझो तो। हर चिता का जलना तुम्हारी मौत है, अगर तुम समझो तो। हर अर्थी का उठना तुम्हारी मौत है, अगर तुम समझो तो। मृत्यु तो चारों तरफ से मुखर है। वृक्ष से टूटा हर पीला पत्ता तुम्हारे जीवन की व्यथा और कथा कह रहा है। हर मुरझाया फूल तुम्हें मृत्यु का संकेत दे रहा है। तो अपनी मृत्यु का सदैव स्मरण करते रहना और इसके लिए मृत्यु के प्रतीकों को पढ़ते रहना।

- जन्म और मृत्यु दुनिया के दो महारोग हैं, जिनसे हर प्राणी पीड़ित है। दरअसल हर जन्म-दिन एक चेतावनी है कि जीवन के इतने वसंत मुट्ठी की पकड़ से फिसल चुके हैं। अब जो कुछ थोड़ा समय शेष है, उसे धर्म साधना के जरिये विशेष बनालें वरना जीवन के अंत में पछताना पड़ेगा। हर जन्म-दिवस एक अल्टीमेटम देकर जाता है, एक चेतावनी देकर जाता है। इस चेतावनी को समझो

और अर्थी उठने से पहले जीवन के अर्थ को समझ लो। अस्थियाँ बिखरने से पहले जीवन में आस्था जगा लो।

- मृत्यु की सब सामग्री तैयार है। कफन भी तैयार है। बस बाजार से लाने की देर है। बाँस और मूँज भी तैयार है। बस आदेश देने की देर है। उठाने व जलाने वाले भी तैयार हैं। बस खबर करने की देर है। जलाने की जगह भी तैयार है। बस अर्थी उठने की देर है। रोने वाले भी तैयार है। बस 'चल बसने' की खबर सुनने की देर है। मृत्यु की सब सामग्री तैयार है। बस श्वास बंद होने की देर है। श्वास बंद होते ही आधा घंटे में सब सामग्री जुट जायेगी और घंटा भर में तो अस्थियाँ बिखर जायेंगी। अतः अस्थियाँ बिखरने से पहले जीवन में 'आस्था' पैदा कर लेना और 'चिता' जलने से पहले अपनी चेतना को जगा लेना। बस जीवन सार्थक हो जायेगा।

- खयाल रखना, न तो जन्म का कोई मुहूर्त होता है और न ही मृत्यु का। जन्म और मृत्यु, बिना मुहूर्त के आने वाले मेहमान हैं। गृह प्रवेश का मुहूर्त होता है, लेकिन गृह त्याग करने के लिए किसी मुहूर्त की जरूरत नहीं पड़ती।

- अपना ऊँचा मकान और ऊँची दुकान देखकर अभिमान मत करना, क्योंकि वह दिन दूर नहीं जब तुम इन्हीं मकान और दुकान की मिट्टी के नीचे दबे पड़े होंगे। तुम्हारी मिट्टी पर घास उग गई होगी और कोई गधा उस घास को चर रहा होगा। इस शरीर की हैसियत मिट्टी से ज्यादा कुछ नहीं है। अतः मिट्टी, मिट्टी में मिले। मिट्टी की अन्त्येष्टि हो, इससे पहले 'परमेष्ठी' की शरण लेनी होगी, वरना मौत के समय 'सिट्टी-पिट्टी' गुम हो जायेगी। उपलब्धियों का उत्सव तो मनाना, लेकिन उनका अहंकार मत करना।

- रात सोने से पहले आज की समीक्षा करें। आज जो ठीक बन पड़ा है, उसकी प्रशंसा करें उसे उपलब्धि मानें और जो गलत हुआ, उसके लिए पश्चाताप करें। आज हुई गलतियों की भरपाई के लिए कल के कार्यक्रम में कुछ तथ्य ऐसे जोड़ें जो खोदे गए गड्ढे को पाटकर समतल कर सकें। मौत को टाला तो नहीं जा सकता, मगर सुधारा तो जा ही सकता है।
- एक बात बिलकुल सच मानिये कि जिंदगी में मृत्यु से ज्यादा सुनिश्चित कुछ भी नहीं है। मृत्यु सर्वाधिक सुनिश्चित है। जीवन मिला है तो जीवन में धन मिले, न मिले कोई जरूरी नहीं है, लेकिन मृत्यु मिलेगी यह निश्चित है। जीवन में पद, पैसा, प्रतिष्ठा मिले, कोई जरूरी नहीं, लेकिन मृत्यु अवश्य मिलती है। आदमी पैदा हुआ, पढ़-लिख पाये, न पाये, कोई जरूरी नहीं, लेकिन मृत्यु जरूर पायेगा। जब मृत्यु निश्चित है तो उससे भय खाने की जरूरत नहीं है। मृत्यु अमृत है, उससे ही जीवन का प्रादुर्भाव होता है। मृत्यु एक मंदिर है, जिसमें जीवन का देवता विराजित है।
- जीवन में एक ही शास्त्र पढ़ने जैसा है और वह है, मृत्यु-शास्त्र। दुनिया के तमाम शास्त्र पढ़ डालो, तमाम मजहबों और धर्मों के प्रतिनिधि ग्रंथों को पढ़ डालो, पर जीवन का सत्य समझ में आ जाये, इसकी कोई गारण्टी नहीं है। वेद पढ़ लो, गीता पढ़ लो, जिनसूत्र पढ़ लो, बाइबिल पढ़ लो, कुरान पढ़ लो, पुराण पढ़ लो; पर जीवन का यथार्थ, जीवन का सत्य समझ में आ जाये, ऐसा कोई जरूरी नहीं है; लेकिन मृत्यु शास्त्र पढ़ लेने के बाद जीवन का शास्त्र अपने आप समझ में आ जाता है। मृत्यु का स्वाध्याय जिंदगी का असली स्वाध्याय है।

- एक विचारक के अनुसार उत्तम जीवन का सूत्र है–न्यूनतम लेना, अधिकतम देना और श्रेष्ठतम जीना। यह जीवन की सर्वोच्च विधा है, सर्वोच्च शैली है। यही जीवन शैली मृत्यु को मंगल रूप प्रदान करती है। अतः मृत्यु के शास्त्र को सुबह–शाम पढ़िये। मृत्यु–बोध से ही जीवन संवरता है। मृत्यु के स्मरण से ही मन पापों से बचता है। मृत्यु के ख्याल से ही वैराग्य का पौधा पनपता है।
- शरीर मृत्यु से जुड़ा हुआ है, जीवन भी चंचल है। यह शरीर हड्डी, माँस, मज्जा तथा रक्त का समूह है, ऊपर से चमड़े से ढँका हुआ है। यह वीभत्स है। भला ऐसे शरीर में कभी सुन्दरता हो सकती है? सर्व अपवित्रताओं का घर, कृतघ्नी और नष्ट हो जाने वाले इस शरीर के लिए मनुष्य कितने पाप करता है? यह देह रोगों का खजाना है, बुढ़ापे के वश में होने वाला है, इसे अन्त करने वाला काल इसके भीतर छिपा है। तटवर्ती वृक्ष की तरह नित्य तरंगों का आघात सहता है। फिर भी अगणित पुण्यों के कारण प्राप्त इस देह को ही आत्मा मानने वाला व्यक्ति बल रूप यौवन से मत्त होकर इसमें स्थित दोषों को नहीं देखता है।
- जिंदगी केवल चार दिन की है और वे चार दिन भी दो आरजू और दो इंतजार में कट जाते हैं। इससे आगे बढ़े तो इंसान की सिर्फ दो दिन की जिंदगी है और उन दो दिनों में एक दिन मौत का भी होता है। अब बचा केवल एक दिन और पता नहीं इस एक दिन की जिंदगी पर आदमी इतना क्यों अकड़ता है ?
- दुनिया में एक ही जगह है, जहाँ आदमी अपनी मर्जी से नहीं जाता, वह है मरघट। मरघट कोई भी आदमी अपनी मर्जी से नहीं जाता। जब मुर्दे को भी बाँध–बूँधकर ले जाना पड़ता है तो फिर जिन्दा

आदमी के जाने का तो सवाल ही नहीं उठता। तुम्हारा घर भी मरघट है, क्योंकि इसमें हर पल तुम्हारे प्राण घट रहे हैं। पूरी दुनिया एक महाश्मशान है। शायद तुम्हें पता नहीं होगा जितने स्थान पर तुम बैठे हो, उतने स्थान पर कम से कम दस मुर्दे जला या दफना दिये गये हैं!

- मृत्यु अपरिहार्य है, इसलिए इसका स्वीकार करना अनिवार्य है। इससे डरकर कहाँ जाओगे। अपराध करने के बाद सजा से डरना कायरता है। अपराध किया है तो सजा को स्वीकार करना वीरता है।
- प्रसिद्धि के भाव कोयले हैं। प्रशंसा मीठा जहर है। मरने के बाद हमारे सम्मान में पूरा बाजार क्या पूरा नगर भी बंद हो जाय तो क्या फायदा? जिंदगी रहते अगर हमने दुर्गति के दरवाजे बंद कर दिये तो जीने के साथ मरने का भी मजा आ जाय।
- मृत्यु ने कान में सबको कह रखा है, तुम धन और धरती का कितना भी फैलाव कर लो। बाह्य जगत में कितनी भी प्रतिष्ठा बढ़ा लो, मकान, बंगले कितने भी इकट्ठे कर लो, जिस दिन मैं चाहूँगी, उसी दिन, उसी क्षण इन सबसे अलग कर दूँगी, जिंदगी का एक श्वास भी तुम संभाल के नहीं रख सकते।
- जब तुम्हारे माँ-बाप ही तुम्हें दुनिया से छोड़कर चले गये तो फिर जरा गहराई से सोचो कि कौन तुम्हारा साथ देगा? दुनिया में तुम बिलकुल अकेले हो। आये भी अकेले और जाओगे भी अकेले। बीच में थोड़े दिन का मेला है। संयोग का वियोग जरूर होगा। तुम नहीं छोड़ोगे तो वह तुम्हें छोड़कर चल देगा। वियोग मुख्य है संयोग नहीं। तुम और सब कुछ भूल जाओ, सिर्फ उस मरघट को याद रखो जहाँ तुम्हें देर-सवेर जाना ही होगा। इस दुनिया में कोई हमेशा रहने

वाला नहीं है और फिर मृत्यु क्या है? रिटर्न टिकिट। जन्म के साथ मृत्यु वैसे ही है जैसे यात्रा के साथ ही लौटने का टिकट।

- शरीर मिट्टी का कच्चा घड़ा है। कच्चे घड़े में पानी रखोगे तो वह कब तक टिकेगा? शरीर भी ज्यादा समय टिकने वाला नहीं है। शरीर को बनने में नौ महीने लगते हैं, लेकिन मिटने में एक क्षण भी नहीं लगता। रात में कितने भी सपने देख लेना, लेकिन आँख बंद होते ही तुम्हारी चीजों पर दूसरों का कब्जा हो जायेगा। जहाँ तुम्हारे नाम की नेमप्लेट लगी है, वह हट जायेगी और वहाँ दूसरे के नाम की लग जायेगी। आज जहाँ बैठकर हुक्म चलाते हो, वहाँ कल कोई दूसरा हुक्म चला रहा होगा।

- बेटा है तो वह बहू की अमानत है। बेटी है तो वह दामाद की अमानत है। शरीर श्मशान की अमानत है। और जिंदगी मौत की अमानत है। तुम देखना–एक दिन बेटा बहू का हो जायगा। बेटी को दामाद ले जायेगा। शरीर श्मशान की राख में मिल जायेगा। तो अमानत को अमानत समझकर उसकी सार संभाल करना। उस पर माल्कियत का ठप्पा मत लगा देना।

- जीवन और मृत्यु पल–पल है। साँस का आना जीवन है। साँस का जाना मृत्यु है। मृत्यु अवश्यंभावी है। जब मरना ही है तो डरना क्या और रोते–रोते क्या मरना? मृत्यु तो जीवन का निचोड़ है और तुम हो कि इससे मुँह चुरा रहे हो। जीवन तो जाने वाला है, तुम उसे बचाने में लगे हो। मृत्यु जो निश्चित है, हर हालत में आने वाली है, उसकी कहीं कोई तैयारी नहीं। जो मृत्यु करे, वह तुम ही कर डालो। मृत्यु जिसे छीन ले उसे तुम खुद छोड़ देना। बस यही संन्यास है, यही समाधि है।

140. पुत्र को पिता का पत्र

उद्योगपति श्री घनश्यामदास बिड़ला (1894-1983) का अपने पुत्र श्री बसन्तकुमार बिड़ला के नाम 1934 में लिखित यह पत्र सबके लिए प्रेरक है-

चि. वसन्त,

यह जो लिखता हूँ, उसे बड़े और बूढ़े होकर भी पढ़ना। अपने अनुभव की बात कहता हूँ। संसार में मनुष्य जन्म दुर्लभ है, यह सच बात है और मनुष्य जन्म पाकर जिसने शरीर का दुरुपयोग किया, वह पशु समान है। तुम्हारे पास धन है, अच्छे साधन हैं, उनका सेवा के लिए उपयोग किया, तब तो वे शुद्ध और पवित्र हैं, अन्यथा वे शैतान के औजार हैं। तुम इन बातों का ध्यान रखना।

धन का मौज-शौक में कभी उपयोग मत करना। रावण ने मौज-शौक की थी। जनक ने सेवा की थी। धन सदा रहेगा भी नहीं, इसलिये जितने दिन तुम्हारे पास में है, उसका उपयोग सेवा के लिए करो। अपने ऊपर कम से कम खर्च करो। बाकी दुखियों का दुःख दूर करने में व्यय करो।

धन शक्ति है। इस शक्ति के नशे में किसी के साथ अन्याय हो जाना संभव है, इसका ध्यान रखो। अपनी सन्तति के लिए यही उपदेश छोड़कर जाओ। यदि बच्चे ऐश-आराम वाले होंगे तो पाप करेंगे और व्यापार को चौपट करेंगे। ऐसे नालायकों को धन कभी न देना। उनके हाथ में जाये, उसके पहले ही गरीबों में बाँट देना, क्योंकि तुम यह समझना कि तुम न्यासी (ट्रस्टी) हो। हम भाइयों ने व्यापार को बढ़ाया है तो यह समझकर कि तुम लोग धन का सदुपयोग करोगे। सदा यह ध्यान रखना कि तुम्हारा धन जनता की धरोहर है। तुम उसे अपने स्वार्थ के लिए उपयोग नहीं कर सकते। भगवान को कभी न भूलना। वह अच्छी बुद्धि देता है। इन्द्रियों पर काबू

रखना, वरना यह तुम्हें डुबा देगी। नीति नियम से व्यवसाय करना। शारीरिक व्यायाम हमेशा करना। आहार पर हमेशा नियंत्रण रखना। जो स्वाद के लिए खाते हैं, वे जल्दी मर जाते है और पर्याप्त कार्य नहीं कर पाते हैं। इन सब बातों का ध्यान रखना। शुभाशीष।

तुम्हारा

– जी. डी. बिड़ला

141. विचार और प्रसंग

भगवान महावीर

2600 वर्ष पूर्व। उस युग का वायुमण्डल पुरानी धार्मिक मान्यताओं, रूढ़ियों व परम्पराओं के प्रति बगावत करने को मचल उठा था। अंधविश्वासों की घुटन से मानव की आत्मा छटपटा रही थी। हिंसा की त्रासदी भयंकर थी। तीर्थङ्कर महावीर ने अहिंसा की शक्ति से हिंसा को निष्प्रभावी बना दिया। मानवीय मूल्यों को प्रतिस्थापित किया।

आचार्य हस्ती

आचार्य श्री हस्ती का अवतरण भारत की एक विरल घटना है। करुणा का निर्झर, मैत्री का उपवन, अध्यात्म का उत्कर्ष, पुरुषार्थ का प्रतिबिम्ब, सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् की समनीति, इन सबका पर्याय थे आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज।

अवसर

प्रेम के लिए ना बोलने वाला दुःखी है। पुण्य के लिए ना कहने वाला भी दुःखी होता है। प्रेम, पुण्य व परोपकार में कभी ना मत करो। ऐसा मौका

आशा तो उसे हाथ से मत गँवाओ। उस समय ऐसा सोचो, कृपासिन्धु परमात्मा ने एक अवसर दिया है।

उनका जाना

रोज कुछ लोग दुनिया में पैदा होते हैं और इतने ही लोग मर जाते हैं। पर दुनिया को उससे क्या फर्क पड़ता है? कौन आया और कौन गया? कुछ मालूम ही नहीं पड़ता। पर जो लोग पर हित के लिए जीते हैं, उनके जाने से जरूर फर्क पड़ता है। वे क्या गये? अकाल-सा पड़ जाता है। आप इसमें से क्या हैं?

कुछ भी साथ नहीं जाता

जहाँगीर के साथ नूरजहाँ नहीं गई। सिकंदर के साथ तख्त और ताज नहीं गये। महाराज रणजीतसिंह के साथ कोहिनूर का हीरा नहीं गया। रावण के साथ सोने की लंका नहीं गई। सारा धन का ढेर पत्थर की तरह यहीं पड़ा रह गया।

विडम्बना

भोगेच्छा समाप्त हो गई। लोगों में जो पहले बहुमान था, वह भी कम हो गया। समवयस्क प्रिय मित्र भी भोग-भोगने के पूर्व ही स्वर्ग सिधार गये। हम भी लकड़ी के सहारे धीरे-धीरे उठ पाते हैं, दृष्टि क्षीण हो गई है। अहो! फिर भी यह शरीर मरने की बात सुनकर चौंक पड़ता है।

स्वयं की कृपा

जन्म, जरा और मरण में मनुष्य की अपनी पसंद काम नहीं आती। यहाँ मनुष्य पराधीन है। इसलिये प्रभुकृपा, गुरुकृपा और बड़ों की कृपा की

अपेक्षा अपने आपकी कृपा अपने पर होना अधिक जरूरी है। जीवन केवल पूर्ण करने के लिए नहीं मिला है।

दृष्टि

पैसे में सुविधा देने की ताकत है, सुख देने की ताकत नहीं। पदार्थ में सुख, यह भ्रमित दृष्टि है। भ्रमित दृष्टि वाला उठ सकता है, जाग नहीं सकता। भ्रमित दृष्टि दौड़ाती है, विवेक दृष्टि छुड़ाती है। सच्चे को जोड़ना, झूठे को छोड़ना।

स्थायित्व

इनकार में दुःख है, स्वीकार में सुख है। हमारे सम्पर्क में जो भी, अनजान भी आये तो उसे इतना प्रेम दो कि वह आपकी पहचान बन जाये। वो ही आपका स्थायी पता बन जाय। हम तो अस्थायी हैं। हम अगर दाता है तो स्थायी हैं।

मन का रोग

हम अनुभव करते हैं कि हमारे जीवन में कितना तनाव है, खिंचाव है, बेचैनी है, अशांति है, व्याकुलता है। हमारे पास सब साधन हों, सम्पत्ति हो तो भी हम दुःखी रहते हैं। इनका अभाव है तो दुःखी है ही। मन का यह रोग सार्वजनिक है, सार्वकालिक है, सार्वदेशिक है।

दिखावा

प्रदर्शन, आडम्बर, दिखावा, फिजूलखर्ची; इन्हें कम करके जब बचत की पूंजी कल्याण में लगायी जाय तो समाज के अनेक व्यक्ति सुखी हो सकते हैं। एक ओर समृद्धि थिरकती है, दूसरी ओर विपन्नता सिसकती है।

एक देह पर एकमात्र चिथड़ा है, दूसरी पर स्वर्ण के गहने लदे हैं। ऐसे में दिखावा करना ठीक नहीं है।

भाड़े का मकान

एक परिवार रात को सो रहा था। अचानक मूसलाधार बरसात आई और मकान गिरने लगा। पत्नी ने पति को जगाया और कहा कि उठो, जल्दी खाली करो, मकान गिर रहा है। आलसी पति ने कहा, ''कोई फिक्र मत करो, मकान तो भाड़े का है।''

क्षणभंगुर देह

यह देह रोगों का खजाना है, बुढ़ापे के वश में होने वाला है। इसे अन्त कर देने वाला काल इसके भीतर छिपा है। तटवर्ती मृदा की तरह नित्य तरंगों का आघात सहता है। फिर भी अगणित पुण्यों के कारण प्राप्त इस देह को ही आत्मा मानने वाला व्यक्ति बल-रूप-यौवन से मत्त होकर इसमें स्थित दोषों को नहीं देखता है।

तीन शब्द

तीन शब्द याद रखें-निर्दम्भता, निर्ग्रन्थता, निश्चिन्तता। (1) किसी प्रकार का दंभ न करें, (2) किसी प्रकार की मन में गाँठ न रखें, (3) सब कुछ गुरु व प्रभु को अर्पण कर निश्चिंत हो जायें।

जीवन प्रतिध्वनि

व्यक्ति अपने मन पर अनुशासन नहीं करता तथा सांसारिक सुखों के संग्रह हेतु शोषण में लगा रहता है। अधिकाधिक धन इकट्ठा करने के लिए दूसरों की आँखों से आँसू निकलवाता है। अपनी रोटी सेकने के लिए पड़ोसी

की अंगीठी के अंगारें खिसकाता है। ऐसा व्यक्ति आज नहीं तो कल, इसका फल अवश्य भोगेगा।

कुछ नहीं चाहिये

चौंतीस वर्ष बाद दो मित्र मिले। एक धनवान बना और दूसरा साधक बना। धनवान मित्र ने अपने कारोबार का वर्णन किया और कहा कि मेरे से कुछ ले ले। साधक मित्र बोला, ''मुझे कुछ नहीं चाहिये। मेडिकल की दुकान में स्वस्थ आदमी क्या दवा लेगा?''

प्रकृति का मान

वैष्णव परम्परा में सूर्य, चन्द्र और गंगा, तीनों की पूजा की जाती है। जैन धर्म में इन तीनों का अद्‌भुत ढंग से सम्मान किया जाता है। व्रती जैनी सूर्योदय के पूर्व तथा सूर्यास्त के पश्चात् आहार नहीं करते। गंगा में पाँव रखकर उसकी पवित्रता नष्ट नहीं करते।

पाथेय

जलगाँव से मुम्बई, बैंगलोर, चेन्नई कहीं दो-चार दिन के प्रवास में जाते हो तो साथ में भाता, सामान, सूटकेस आदि ले जाते हो, जिससे आगे की यात्रा सुखद हो। परन्तु मृत्यु का ऐसा प्रवास जहाँ से लौटना तुम्हारे हाथ में नहीं, उसके लिए क्या पाथेय ले जाने की तैयारी की है?

नये सिरे से मिलो

अगर कमीज सिलवानी हो तो दर्जी को नया (फ्रेश) माप देते हो, पुराने माप से कमीज नहीं सिलवाते। अगर कोई व्यक्ति मिल जाय तो दो बरस पहले हुए झगड़े को याद क्यों करते हो। पुराने पाप को दिमाग से निकाल दो। नये सिरे से मिलो।

तुलना

दूसरे के साथ की हुई तुलना हमारे दुःख का कारण है। मेरा जीवन विकास के लिए है, स्पर्धा के लिए नहीं। स्पर्धा से निकल जाओ, विकास में बढ़ो। आपके पिताजी से आपके पास ज्यादा है, फिर आखिर क्या चाहते हो। छह हजार वर्गफीट का बंगला भी मिले तो क्या, यदि हृदय बड़ा नहीं हो।

क्रम

सारी मेहनत, भाग-दौड़ अधिक के लिए है। यह निश्चित है कि भोजन के बिना शरीर नहीं चल सकता। संपत्ति के बिना संसार नहीं चल सकता। जिनके पास क्रम है, उनको सुखी किया जा सकता है। जिनको कम लगता है, उन्हें सुखी नहीं किया जा सकता।

साबुन

एक आदमी ने दुकानदार से नहाने का साबुन माँगा। हमाम, लक्स, लाइफबॉय, निरमा, नीम, सन्तूर आदि जितनी तरह के साबुन थे, सभी दिखा दिये। लेकिन उसे एक भी पसन्द नहीं आया। आखिर दुकानदार ने कहा- ''भाई! कितने भी साबुन लगा लो, तुम्हारी वर्ण जैसा है, वैसा ही रहेगा।''

माफी

पाप करने वाले को माफ कर दो। अपने पाप को साफ कर दो। गुणियों के गुण को याद करो। अगर आप ऐसा नहीं कर सकते हैं तो यही ध्यान रखना कि आप ऐसे पुल को तोड़ रहे हैं, जिस पर आपको चलना है।

साधु या अमीर

चौबीस घण्टे में किसको याद करते हो। दस करोड़ के मालिक को या या साधु को। स्नान करते समय, बाल कटाते समय, पैदल चलते समय

या भोजन करते समय क्या कभी साधु को याद करते हो? सच बताओ किसको याद करते हो। कभी ख्याल आता है कि साधु महाराज का जीवन कितना कठिन है, कितना पवित्र है।

निरासक्ति

लातूर व कच्छ के भूकम्प ने सारा अहंकार तोड़ दिया, सारी आसक्ति तोड़ दी। भूकम्प से पीड़ित एक व्यक्ति को 10,000 रुपये लेने के लिए आग्रह किया। उसने लेने से इंकार कर दिया। बोला–''मैंने घर में 40 लाख रखे थे, वो भी चले गये अब 10,000 लेकर क्या करूँ?''

भलाई की कमाई

एक रिक्शा ड्राइवर हर पूर्णिमा और अमावस्या की पूरी आमदनी झोंपड़पट्टी में जाकर गरीबों को बाँट देता था। जब वो मरा तो उसकी अन्तिम-यात्रा में दस हजार लोग थे।

स्थायी जमा

आप लोग स्थायी जमा (एफडी) इसलिये कराते हो कि जब समय खराब होगा, तब काम आयेगी। मैं कहता हूँ कि स्थायी जमा इसलिये कराओ कि जब बुढ़ापा आया, तब दान-पुण्य के लिए उसका उपयोग हो सके।

प्रभाव

सम्पत्ति से प्रभावित-राक्षस। सत्ता से प्रभावित-पशु। सत्कार्य से प्रभावित-मानव। सदगुणों से प्रभावित-संत। चारों ही अगर एक साथ आ गये तो आप किससे प्रभावित होंगे, सम्पत्ति वाले से या सदगुणी से?

पात्रता

परमात्मा हमें प्रकाश देता है, प्रेरणा, पात्रता व आखिर में प्रसन्नता देता है। परमात्मा के कार्य से हमें निर्भय होना चाहिये। संसार के काम में भयभीत होना चाहिये। धर्म करते चलें और पाप छोड़ते चलें, यह प्रेरणा परमात्मा से मिलती है। परमात्मा के वचन हृदय तक पहुँच जाना, यह पात्रता है।

स्वार्थ

मकान में आग लग गई–पानी डालना शुरू। मकान तो बेच दिया है–पानी डालना बंद। अरे, अभी तक सेल–डीड नहीं हुआ–पानी डालना चालू। बीमा करवाया हुआ है–पानी डालना बंद। अरे प्रीमियम नहीं भरा–पानी डालना चालू। आदमी कितना स्वार्थी है।

वाणी व खाणी

आदमी को वाणी व खाणी का पूरा ध्यान रखना चाहिए। मुँह से क्या खाना व मुँह से क्या बोलना? इसका जो व्यक्ति ध्यान रखता है उसे कभी पश्चात्ताप नहीं करना पड़ता। जीवन में शांति, मृत्यु में समाधि व परलोक में सद्गति चाहिये तो खाने व बोलने का ख्याल तो रखना ही पड़ेगा।

कृतघ्नता

आदमी बहुत बेभान है। जिसकी कृपा से उसे दिखाई दे रहा है, वह उसको ही नहीं देख रहा है। जिसकी कृपा से उसे सुनाई दे रहा है, वह उसकी बात नहीं सुन रहा है। आदमी कितना कृतघ्न है कि वह उसे ही भुला देता है, जिसकी वजह से उसका अस्तित्व है।

परिपक्वता

घड़ा कई प्रक्रियाओं से गुजरने के बाद कभी न कभी परिपक्व होता है। परन्तु हम कितनी जगह जाकर, कितने महात्माओं के प्रवचन सुनकर, अनेक साधनायें करके तथा इतनी प्रक्रियाओं से गुजरकर भी परिपक्व नहीं हो रहे हैं?

धनासक्ति

कामवासना की अपेक्षा अर्थवासना बहुत भयंकर व अनर्थकारी है। कामवासना कुछ समय के लिए होती है। परन्तु अर्थवासना चौबीसों घण्टे मनुष्य को परेशान करती है। अर्थवासना घटाने के लिए विलासितापूर्ण जीवन से सादगी की ओर लौटना चाहिये।

गृहिणी

पारिवारिक जीवन की सफलता बहुत अंशों में गृहिणी की क्षमता पर ही निर्भर है। दुर्दैव से यदि गृहिणी कर्कशा, कटुभाषिणी तथा अनुदार मिल जाती है तो व्यक्ति का न सिर्फ आत्मसम्मान और गौरव घटता है, बल्कि कुटुम्ब की प्रतिष्ठा भी आहत होती है। नारी को अपनी भूमिका की अहमियत के प्रति सचेष्ट रहना चाहिये।

जीवों के कष्ट

कोई जन्मान्ध, गूंगा, बहरा, अपंग हो; उस पर प्रहार किया जाय तो उसे कष्ट होता है, लेकिन वह व्यक्त नहीं कर सकता है। उसी तरह पानी, अग्नि, वनस्पति, हवा आदि एकेन्द्रिय जीवों का अपव्यय, छेदन-भेदन, हिंसा आदि करने पर उन्हें कष्ट होता है, लेकिन वे व्यक्त नहीं कर सकते हैं।

पुरुषार्थ जगायें

जब भी मैं किसी व्यक्ति को अपने भाग्य को कोसते हुए देखता हूँ तो मुझे अफसोस होता है। केवल काहिल और निकम्मे लोग ही भाग्य का रोना रोते हैं कर्मठ, परिश्रमी तथा उत्साही लोग अपने दुर्भाग्य की रेखायें मिटाकर नई लकीरें खींच लेते हैं। भगवान महावीर का कर्मवाद का सिद्धान्त पुरुषार्थ की प्रबल प्रेरणा देता है।

बुद्धि व हृदय

कुएँ में से पानी निकालने का काम बुद्धि करती है। आदमी बाल्टी के रस्सी बाँधकर अन्दर छोड़ता है। परन्तु बाल्टी नीचे झुककर जब तक समर्पित नहीं हो जाती है, तब तक बाल्टी में पानी नहीं भरा जा सकता। यह काम हृदय का है। बुद्धि संबंध बढ़ाने का काम करती है। हृदय संबंध बचाने का काम करता है।

उदाहरण

एक चौबीस साल के लड़के को उसके पिताजी शादी करने के लिए समझा रहे थे। बोले, ''बेटा! शादी करले, उमर हो गई है।''

बेटा बोला, ''पिताजी! मैं पिछले कई वर्षों से आपको और माताजी को अपनी आँखों से देख रहा हूँ, मुझे समझाने की क्या आवश्यकता है।''

अपना

एक लड़के की सगाई हुई। जिस लड़की से सगाई हुई, उसको लेकर वह अपने घर आया और सब बताने लगा। बोला, ''यह बंगला अपना है, यह कार अपनी है, यह अतिथि गृह (गेस्ट हाउस) अपना है।'' जो आज तक 'उसका' था, सगाई होते ही वह 'अपना' बन गया।

शादी

एक व्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति से कहा, ''भाई जब से शादी की है, हम करोड़पति बन गये हैं।'' उस दूसरे व्यक्ति ने उसको बधाई दी तो वो बोला, ''भाई काहे की बधाई दे रहे हो, शादी से पहले मैं अरबपति था।''

142. बोध-वाक्य

- दुःख और दोष की जिम्मेवारी दूसरे पर मढ़ना उचित नहीं। यह तो कर्मसत्ता के अधीन है। कलह को समाप्त करना हो तो गलती स्वीकार करो।
- परिवार में साप्ताहिक या पाक्षिक मीटिंग होनी चाहिये।
- टीवी देखते हुए भोजन बनाना नहीं, टीवी देखते हुए भोजन करना नहीं और अशांत मन से भोजन करना नहीं।
- सत्ता और सत्य में क्या फर्क है? सत्ता के लिए औरों को सताना पड़ता है। सत्य के लिए स्वयं को तपाना पड़ता है।
- बहू आयेगी तो संस्कार लायेगी। बहुरानी आयेगी तो कार लायेगी। जो कार लायेगी वो अपनी सरकार चलायेगी।
- पैर फिसल जाये तो संभलना मुश्किल है। कलंक लग जाये तो धुलना मुश्किल है। लेकिन यदि मानव भव को एक बार हार गए तो फिर मुश्किल ही नहीं, महामुश्किल है।
- हम लोग क्यों नहीं देखते कि जीवन का अर्धांश तो नींद में ही चला जाता है। बाकी बचे समय में-से अधिकांश खाने-पीने, मौज-मस्ती, गपशप और फालतू कामों में खर्च हो जाता है।

- हमें अगर पशु न बनकर परमात्मा बनना है तो प्रभु की आज्ञा के अनुसार जीवन जीना चाहिये।
- पाप और पारा कभी पचता नहीं है। खुद और खुदा से कुछ भी छिपा नहीं है। मानवता और महानता; करुणा, प्रेम और मैत्री पर निर्भर करती है; तोप, तीर, तलवार और तमंचे पर नहीं।
- गई संपत्ति परिश्रम से, विस्मृत ज्ञान अध्ययन से, नष्ट स्वास्थ्य औषधि से एवं नष्ट संयम गुरुकृपा से पुनः मिल सकता है, लेकिन गया हुआ वक्त वापस कभी नहीं मिल सकता।
- भोजन के पहले सन्त को आहार बहराने की भावना करनी चाहिये। यह भावना भी करनी चाहिये कि मुझे आहार मिला है। सबको सात्विक आहार मिले। दुनिया में कोई भूखा न सोए।
- मनुष्य की जीभ और जीवन में छत्तीस का आंकड़ा है। वह ढंग का नहीं ढोंग का जीवन जी रहा है। आत्मदर्शन का नहीं, प्रदर्शन का जीवन जी रहा है। इसीलिए वह दुःखी और क्लांत है।
- नंगे पाँव चलने वालों के पीछे गाड़ी वाले क्यों घूम रहे हैं? गुरु और परमात्मा की कृपा और पुण्य का धन जिसके पास है, उसे किसी की चिन्ता नहीं करनी पड़ती।
- पक्षी का जीवन उसका पंख है। पशु का जीवन उसके पैर हैं। आदमी का जीवन उसका विवेक है।
- हमें बंगला मिले या झोंपड़ी, हमें प्रसन्न रहना चाहिये। अगर जीवन में प्रसन्नता नहीं है तो समझिये पुण्य की कमी है।

- गुरु आज्ञा पर दान दे वो जघन्य। गुरु के संकेत पर दान दे तो मध्यम और गुरु की इच्छा पर दान दे वो श्रेष्ठ।
- तीन प्रकार के कलंक से हमेशा बचना चाहिये–1. क्रूरता, 2. कठोरता, और 3. कृतघ्नता।
- एक सुसंस्कारी माता सौ शिक्षकों से भी अधिक शिक्षा/संस्कार दे सकती है।
- जो आत्मिक सुख एक अंकिचन मुनि को है, वह सुखानुभव न देवेन्द्र को है और न ही देश के चक्रवर्ती को है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

के विविध सेवा सोपान

जिनवाणी हिन्दी मासिक पत्रिका का प्रकाशन

जैन इतिहास, आगम एवं अन्य सत्साहित्य का प्रकाशन

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान

अखिल भारतीय श्री जैन विद्वत् परिषद् का संचालन

वीतराग ध्यान साधना केन्द्र का संचालन

उक्त प्रवृत्तियों में दानी एवं प्रबुद्ध चिन्तकों के रचनात्मक सक्रिय सहयोग की अपेक्षा है।

सम्पर्क सूत्र

मंत्री- सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

दुकान नं. 182, के ऊपर, बापू बाजार,

जयपुर-302003 (राजस्थान)

दूरभाष : 0141-2575997, 2571163

फैक्स : 0141-2570753 ई-मेल : sgpmandal@yahoo.in